ग्रंथांक...404

आदर्श ब्रह्मचारी स्व. सोहनलाल जैन

पुण्य स्मरण

आदर्श ब्रह्मचारी स्व. सोहनलाल जैन की सुसमाधि

स्वप्रेरित अर्थ सौजन्य ज्ञानदानी

श्रीमती भूरी देवी धर्म पत्नि रतनलालजी खोड़निया, श्रीमती निर्मला ध/प. नरेन्द्र कुमार खोडनिया (अध्यक्ष सागवाडा नगरपालिका) सागवाड़ा (जि. डुंगरपूर राजस्थान)

ग्रंथांक-404
संस्करण-प्रथम 2025
प्रतियाँ-500
मूल्य-सुसमाधि

प्राप्ति स्थान एवं सम्पर्क सूत्र

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त

(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान

द्वारा-श्री हेमन्त प्रकाश देवड़ा (महावीर)

चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,

उदयपुर (राज.)-313001/मो. 94608-78187

(2) डॉ. नारायणलाल कछारा

सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान, 55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001

फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622

E-mail:nlkachhara@yahoo.com

मम आदर्श दीर्घकालीन (25 वर्ष) ब्रह्मचारी शिष्य-(गुणस्मरण)

(सौम्य-शान्त-समताधारी : सोहनलाल ब्रह्मचारी)

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगति सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
सम्पद्यतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्ग।।

गुणानुरागी-आचार्य कनकनन्दी

(चालः 1. पाउले चालती... 2. जय हनुमान... 3. फूलों का तारों का... 4. बहुत प्यार करते हैं...)

हे! सौम्य-शान्त-समताधारी...मम शिष्य सोहनलाल ब्रह्मचारी...
तव आदर्श स्व-पर हितकारी...तव पथ में चले सभी ब्रह्मचारी/(नर-नारी)...ध्रुव...

हित-मित-प्रिय-सत्यभाषी...गुणग्राही आप दोष परिहारी...
आप हो देव-शास्त्र-गुरु भक्त...आहार अनन्तर प्रसादग्राही...
भोजन में भी शान्ति-सन्तोषधारी...आहार-औषधि व ज्ञानदानी...
जिनवाणी भक्त-व्यवस्थाकारी...संघ सेवा-व्यवस्था में अग्रणी...(1)...

मन्द कषायी (व) भद्र परिणामी...प्रूफ रीडिंग तथा स्वाध्याय प्रेमी...
कर्त्तव्यशील तथा हो स्वावलम्बी...आदेश-निर्देश-दबाव रिक्त...
ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा से विरक्त...लन्द-फन्द-द्वन्द्व से रिक्त...
परनिन्दा-चुगली-अपमान रिक्त...नाम-बड़ाई कारण से विरक्त...(2)...

उक्त गुणों से मण्डित आप महन्त...पच्चीस वर्षों से संघ में स्थित...
अतः आपको दिया था अधिकार...सुसम्वाद के प्रचार-प्रसार...

प्राचीन सुयोग्य शिष्य होने के कारण...देश-विदेशों के सूचना से सम्पन्न...

अन्य को लाभान्वित करने हेतु...अन्य से अधिक दिया (आपको) अधिकार...(3)...

योग्य को ही दूँ अधिकार व फटकार...जिससे वे बनते हैं उच्चतर...

''मर्दनं गुण वर्द्धनं'' के अनुसार...सही मानते हैं वे, न कि अनादर...

उक्त सभी सुगुणों के कारण...सूचना देने में भी होता था संकोच...

जिससे सम्वाद न होता प्रचार...जिससे न होता कार्य सरल...(4)...

इस हेतु आपको बीस वर्ष बाद...अनुशासन हेतु बोला कई बार...

अन्यथा आपकी प्रशंसा सतत...अन्य अनुशासन पालन में तत्पर...

विनय-अनुशासन में भरपूर...अन्य दोषों से आप रहते थे दूर...

नाना पुरस्कार-पदवी दिया हूँ...आपको सदा सम्मान दिया हूँ...(5)...

आपके गुणों से श्रावक भी सदा...आदर-सत्कार से बोलते थे दादा...

सभी बोलते ब्रह्मचारी हैं श्रेष्ठ...ऐसा ब्रह्मचारी अन्यत्र दुर्लभ...

धर्म-दर्शन-सेवा संस्थान के...आप थे सदस्य प्रारम्भ से...

साहित्य विभाग आपका विशेष...तीन सौ ग्रन्थ प्रकाशन में श्रेय...(6)...

संसार-शरीर-भोगों से विरक्त...दीक्षा लेने हेतु लगाये चित्त...

स्वस्थ-व्यस्त-प्रशस्त आप...शीघ्र दीक्षा हेतु निकाला मुहुर्त...

सौभाग्य आपका दिया शीघ्र फल...सामायिक किये आप आशीर्वाद लेकर...

सामायिक में ही ब्रह्ममुहूर्त में...समता-शान्ति से पधारे स्वर्गपुर...(7)...

ये हैं आपका सातिशय पुण्य...दान-दया-सेवा-शान्ति का पुण्य...

जिससे की समाधि हुई उत्तम...बिना रोग-पीड़ा-संक्लेश भाव...

आपके गुण भी मैं सम्वर्द्धन करूँ...बोधि-समाधि-परिणाम शुद्धि करूँ...

आपको मोक्ष मिले भावना करूँ...''गुरु कनक'' तुझे आशीर्वाद दूँ...(8)...

योगेन्द्रगिरि, दि-21/1/2025, रात्रि-10.48 व 2.08

(ब्र. सोहनलाल के सुसमाधि दिवस)

स्व-पर-विश्व हित हेतु (स्व.ब्र. सोहनलाल से प्राप्त शिक्षा-प्रेरणा)

मम सनम्र सत्यग्राही-सुदृढ़ प्रतिज्ञा

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल: 1. पाउले चालती... 2. मेरे गुरुदेव आए... 3. जय हनुमान...)

सनम्र सत्यग्राही बनूँ आत्मविश्वासी...हित-मित-प्रिय-सत्यभाषी...
स्व-पर विश्व हित भावनाधारी...मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-साम्यधारी...(1)...
कमल सम बनूँ निर्लिप्त वीतरागी...कठोर परिस्थिति में भी विकसित भावी...
वज्र सम कठोर बनूँ पारदर्शी...मक्खन सम मृदु तथा घृतस्रावी...(2)...
सुहृदयी माता सम परोपकारी...दयालु-दक्ष सर्जन सम दोष परिहारी...
सूर्य सम स्व-पर-प्रकाशी तेजधारी...चन्द्र सम शीतल शुभ ज्योत्स्नाधारी...(3)...
हंस सम बनूँ गुणग्राही दोष परिहारी...गाय सम बनूँ ज्ञान पयोधर धारी...
अणु सम बनूँ अविभागी स्वभावी...आकाश सम उदार अनेकान्तवादी...(4)...
सहयोगी अन्य के बनूँ धर्मद्रव्य सम...स्थितिकरण करूँ अधर्म द्रव्य सम...
पर के आत्मपरिणमन में काल द्रव्य सम...आकिञ्चन्य बनूँ परकर्तृत्व बिन...(5)...
''परस्परोग्रहो जीवानां'' सूत्र जानूँ...''परस्परोपग्रहो द्रव्याणां च गुणानां'' मानूँ...
अरिहन्त-सिद्धों को परम आदर्श मानूँ...आगम-अनुभवों से निर्णय करूँ...(6)...
राग-द्वेष-मोह-पक्षपात बिना...दबाव-प्रलोभन-भय बिना...
अन्तःप्रज्ञा-दूरदृष्टि-प्रयोग द्वारा...कार्य सम्पादन करूँ विवेक द्वारा...(7)...
अधिकतम जन होते रागी-द्वेषी-मोही...ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा-मत्सरभावी...
छिद्र-अन्वेषणकारी-निन्दक-द्वन्द्वी...स्व-गुण-दोषों से होते कुज्ञानी...(8)...
उनसे अप्रभावी रहूँ धारूँ समताभाव...पर रिमोट-कण्ट्रोल से न चलूँ कदाचित्...
समीक्षा-समन्वय-सद्भाव सहित...भावना भाऊँ अन्त्योदय-सर्वोदय निमित्त...(9)...
आदिनाथ का आदर्श अनुकरण करूँ...मारीचिकुमार सम दम्भी से शिक्षा भी लहूँ...
''आदहिदं कादव्वं सुट्ठं'' पालन करूँ...''यदिचेत् परहिदं कादव्वं'' कनक करूँ...(10)...

तथ्यं पथ्यमगर्वितं सुनिपुणं माधुर्यवर्यं वचः,
कार्येण प्रविचार्य जल्पति धिया योऽल्पं विकल्पक्षमम्।
धन्यैर्मन्दिरचत्वरे मुनिगणश्चैवंविधोऽवाप्यते,
सत्कल्पद्रुमपादपः परिसरे पुण्यात्मभिर्लभ्यते।। (67) धर्म रत्ना.

जो मुनिसमूह कार्यवश बुद्धि से अतिशय विचार करके सत्य-हितकर, गर्व से रहित व चातुर्य से परिपूर्ण ऐसे उत्तम एवं मधुर वचन को परिमित मात्रा में बोलता है, जो वस्तु के निर्णय करने में समर्थ होता है, ऐसे मुनिसमूह को भाग्यवान् पुरुष ही अपने गृह के आंगन में प्राप्त किया करते हैं। सो ठीक भी है, अपने घर के आंगन में उत्तम कल्पवृक्ष पुण्यात्माओं को ही प्राप्त होता है।

योगेन्द्रगिरि, दि-24/1/2025, रात्रि-10.11

स्व. ब्र. सोहनलाल में उपरोक्त गुण थे, वे परनिन्दा आदि से रहित थे, उनकी स्वाध्याय पुस्तक से प्राप्त दोहा-

निन्दा में रस बहुत है, पापिन को मन भाय।
धर्म ज्ञान से शून्य जन, सुन आनन्द मनाय।।
पावन तज चाहे अशुचि शुकर, कुकर काग।
ऐसे ही निन्दक जन में, पर निन्दा में राग।।

मेरे आराध्य देव आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव एवं समता तीर्थ धाम सीपुर एक समन्वय

ब्र. सोहनलाल

मैं अपने आप को महान् भाग्यशाली एवं पुण्यशाली मानता हूँ, जो मुझे ऐसे महान् उपकारी, जन-जन के प्रिय ज्ञान के भण्डार, स्वाध्याय प्रेमी गुरु का चरण सानिध्य मिला। गुरुदेव महान् उदारभावी, अनुशासन प्रिय, सत्यान्वेषी उच्च लक्ष्य के धारक, हित-मित-स्पष्ट उपदेशी, नवीन-नवीन कल्पनावान्, सत्य-समता-शांति के

उपासक, गंभीर, शांत, सौम्य मूर्ति, प्रज्ञाशाली, धैर्यवान्, शीलवन्त, पर्यावरण प्रेमी बाल्यकाल से प्रखर बुद्धि, प्रतिभा के धनी, ज्ञान के पुंज अनेक गुणों के भण्डार, सब जीवों के प्रति दया, करुणा, परोपकार, वात्सल्य, सेवा की भावना से ओतप्रोत, ख्याति, पूजा, लाभ, प्रसिद्धि, ढोंग, पाखण्ड, निंदा, ईर्ष्या, घृणा, तृष्णा, बाह्य आडम्बर, उपेक्षा, अपेक्षा, प्रतिक्षा आदि से दूर अपने ध्यान-अध्ययन में लीन रहने वाले ऐसे गुरुदेव जिन्होंने अभी तक अनेक विषयों जैसे धर्म, दर्शन, विज्ञान, गणित, आयुर्वेद, राजनीति, इतिहास, भूगोल, खगोल, व्यसन मुक्ति, पर्यावरण, विश्वशांति, नैतिक शिक्षा पर 275 ग्रंथों (210 गद्य ग्रंथ+65 पद्य ग्रंथ) की रचना कर विश्व का महान् उपकार किया है।

समता तीर्थ धाम सीपुर क्षेत्र के लिए समर्पित ऊर्जावान् परम गुरु भक्त श्री नितिन भैया के अनेक बार अनुरोध एवं निवेदन पर जब आचार्यश्री कनकनन्दीजी ससंघ का सन् 2010 का चातुर्मास सीपुर क्षेत्र पर हुआ उस समय श्रमणों के निवास, चौका, आहार की व्यवस्था किराये के भवन में होती थी। यहाँ पर जैन समाज का एक भी घर-परिवार नहीं है। नीतिन भैया ने आचार्य कनकनंदी गुरुदेव ससंघ से आशीर्वाद प्राप्त कर सन्त भवन के लिए भूमि खरीदी, उस पर विशाल सन्त भवन का शिलान्यास संघ सानिध्य में हुआ। उसी भूमि पर वर्तमान जिनशासन नायक भगवान् महावीर का 2537वाँ निर्वाण महोत्सव 2537 कि.ग्रा. का लड्डू चढ़ाकर मनाया। चातुमार्स अवधि में भैया जी प्रतिदिन आचार्य श्री संघ को श्री फल भेटकर 21 इक्कीस चातुर्मास करने का निवेदन करते रहे और अभी आजीवन क्षेत्र पर रहने के लिए निवेदन कर रहे हैं। दीर्घ अवधि के पश्चात् वर्ष 2016 के चातुमार्स का लाभ भैया जी को मिला, इस अवधि में देव शास्त्र गुरु जिनालय का एक दिवसीय पंच कल्याणक महोत्सव एवं दो क्षुल्लिका दीक्षा हुई जिसमें भैया जी ने अपनी भावना व्यक्त करते हुए कहा कि अभी मुझे इस क्षेत्र का बहुत विकास करना है, मेरी भावना है कि मैं सन् 2021 में आ. कनकनन्दी गुरुदेव के स्व संघस्थ सानिध्य में आचार्य कुन्थुसागर के 150 साधुओं का एक विशाल सम्मेलन करना

चाहता हूँ, साथ ही वृद्ध, रोगी (अस्वस्थ) साधुओं के लिए स्थायी निवास के हेतु एक विशाल भवन बनाना चाहता हूँ। क्षेत्र पर लगातार 12 वर्षों से सन्तों के चातुर्मास हो रहे हैं। ऐसी उत्कृष्ट भावना एवं व्यवस्था करने वाले ऊर्जावान् गुरु भक्त नितीन भैया के लिए परम पूज्य गुरुदेव का शुभ आशीर्वाद एवं मेरी शुभकामना शुभ भावना भाता हूँ कि आपकी देव, शास्त्र, गुरु के प्रति जो भक्ति है उसमें उत्तरोत्तर वृद्धि हो एवं आप शतायु हो। इस मंगल कार्य में तन, मन, धन समय शक्ति से क्षेत्र पर आजीवन अपनी निस्वार्थ सेवा देने की भावना व्यक्त कर आचार्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त करने वाली ब्र. रमीला दीदी व ब्र. जीना दीदी जो वर्तमान में साधुओं की वैयावृत्य में संलग्न है, उनकी इस उत्तम भावना की मैं नवकोटि से अनुमोदना करता हूँ। इसी मंगल भावना के साथ।

(संघस्थ आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव) ब्र. सोहनलाल जैन

दिनांक-8/4/2017

भारतीय संस्कृति में निहित पर्यावरण सुरक्षा

-ब्र. सोहन लाल देवड़ा

भारत अनादिकाल से आध्यात्मिक देश रहा है। एक समय था जब भारत को विश्व गुरु, सोने की चिड़िया, घी, दूध की नदी बहने वाला देश कहा जाता था। भारत में जन्म लेने वाले तीर्थंकर, बुद्ध, ऋषि, मुनि आदि आध्यात्मिक वैज्ञानिकों ने अनन्त ज्ञान से संसार के सभी तत्वों के सभी रहस्यों को विश्व के समक्ष रखा। भारत ने विश्व को ज्ञान-विज्ञान, गणित, अहिंसा, विश्व शान्ति, पर्यावरण सुरक्षा, समाज व्यवस्था आदि सिद्धान्त सूत्र देकर विश्व का भरण पोषण किया।

भारतीय परम्परा में अखिल जीव जगत् एवं सम्पूर्ण प्रकृति की सुरक्षा-समृद्धि में सबसे महत्वपूर्ण अंग है।

पर्यावरण सुरक्षा के लिए उत्तम तरीका है-भावशुद्धि। अभी तक वैज्ञानिक और पर्यावरण विद्वानों द्वारा जल, मृदा, वायु, ध्वनि आदि को प्रदूषण मानकर पर्यावरण

सुरक्षा के उपाय का प्रतिपादन किया है, परन्तु भारतीय महान् आध्यात्मिक वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित भावात्मक प्रदूषण तथा उससे प्रभावित होने वाले समस्त प्रदूषण एवं पर्यावरण सुरक्षा के उपाय स्थाई एवं शाश्वतिक है। पर्यावरण सुरक्षा के लिए कुछ तरीके काम में लाये जा रहे हैं, तथा लाये जा सकते है। आचार्यश्री कनकनंदी जी गुरु देव द्वारा रचित पुस्तक ''विज्ञान को भी अविज्ञात सत्य'' के कुछ अंश के आधार पर मैं अपने विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ।

1. आध्यात्मिक पर्यावरणः-

अहिंसा को पर्यावरण का संरक्षण ''अहिंसा परम सुखम्'' ''जीयो और जीने दो'' जैन धर्म के अनुसार जीवों की सुरक्षा ही परम धर्म है, अनादि काल से भारतीय परम्परा में तो वृक्ष, पर्वत, नदी, अग्नि, सूर्य, पृथ्वी आदि की पूजा की जाती है, इसका मूल कारण इनकी सुरक्षा है। जैन मुनि समस्त प्रकार की हिंसा के मन, वचन, काय से त्यागी होते हैं।

पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, वनस्पति, एकेन्द्रिय स्थावर एवं द्वि इन्द्रिय, लट, त्रि इन्द्रिय चींटी, चतुरिन्द्रिय मक्खी, पंचेन्द्रिय मनुष्य पशु, पक्षी आदि त्रस आदि जीवों को कष्ट नहीं पहुँचाना अहिंसा है। हिंसा के कार्य जैसे वृक्ष का उखाड़ना, भूमि को खोदना, घास पत्ते तोड़ना, पानी ढोलना, आदि कार्य बिना प्रयोजन नहीं करना चाहिए। मानव विचार शील प्राणी होने के बावजूद भी राग, द्वेष क्रोध, मान, माया लोभ, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह आदि के द्वारा अपने मन को मलीन कर मानसिक अशान्ति का कारण स्वयं बनता है, जिससे कई प्रकार की शारीरिक और मानसिक बिमारीयों को आमन्त्रित करता है।

बूचड़ खानों में प्रतिदिन हजारों जानवरों को काटा जाता है जिससे प्रकृति में प्रतिक्रिया रूप से भूकंप, अकाल, अतिवृष्टि, अनावृष्टि आदि स्थिति पैदा होती है। प्रकृति ने पर्यावरण की दृष्टि से मनुष्य के लिए (शाकाहारी प्राणी को) जो भोजन में मिलना चाहिए सभी तत्व भरपूर मात्रा में उपलब्ध कराये है, फिर भी मनुष्य मांसाहारी बनकर पर्यावरण को दूषित कर रहा है।

2. समिति से पर्यावरण की सुरक्षाः-

जैन साधु पूर्णतया समिति का पालन करते है, सावधानी पूर्वक जीवों की सुरक्षा करना समिति है।

समिति के 5 प्रकार है-(1) ईर्या समिति (2) भाषा समिति (3) एषणा समिति (4) आदान निक्षेपण समिति (5) उत्सर्ग समिति।

(1) ईर्या समिति में सूर्य के प्रकाश में जीवों की दया पूर्वक रक्षा करते हुए चलने का विधान है।

(2) भाषा समिति में हित-मित-प्रिय वचन बोलना जिससे शब्द प्रदूषण (कलह) नहीं होता।

(3) एषणा समिति में शुद्ध सात्विक, शाकाहार-फलाहार-दूग्धाहार होता है जिससे जीवों की हिंसा नहीं होती और शारीरिक और मानसिक रोग भी नहीं होता।

(4) आदान निक्षेपण समिति में हर वस्तु को देखकर उठाना, रखना, प्रयोग करना, जीवों की रक्षा करना आदि।

(5) उत्सर्ग समिति में जीव जन्तु से रहित एकान्त स्थान, ग्राम, नगर, रास्ता आदि से दूर स्थान में मल-मूत्र, गन्दगी आदि का विसर्जन करना इससे ग्राम आदि में प्रदूषण, जीवाणू नहीं फैलते इससे पर्यावरण की स्वच्छता रहती है।

(3) अपरिग्रह से पर्यावरण का संरक्षणः-

SIMPLE LIVING AND HIGH THINKING "सादा जीवन एवं उच्च विचार" भारत देश की महान् परम्परा है, इससे व्यक्ति का व्यक्तित्व महान्, पवित्र, उदार तो बनता ही है, उसके साथ-साथ पर्यावरण सुरक्षा में भी महान् योगदान मीलता है। उच्च विचार के कारण वह किसी भी जीव को और विश्व के किसी वस्तु को नुकसान नहीं पहुँचाता है।

बाहरी दिखावा और विलासिता तथा समाज में अपनी प्रतिष्ठा बनाने की होड़ में वह अधिक धन-सम्पति की चाह में दूसरों का शोषण, पर्यावरण का दोहन तथा वनस्पति, जल, प्रदूषण, खनिज आदि को नुकसान पहुँचाता है, जिससे प्रकृति का

संतुलन बिगड़ता है। फैक्ट्री के धूँए, गन्दा मलवा, आदि द्वारा वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण और मिट्टी (मृदा) प्रदूषण होता है। इसलिये भारतीय परम्परा में गृहस्थ लोग सीमित परिग्रह (अपरिग्रह अणुव्रत) रखते है तथा साधु सन्त परिग्रह त्याग कर देते है। दिगम्बर साधु तो अन्य परिग्रह के साथ-साथ वस्त्र का भी त्याग करते हैं।

4. व्यसन मुक्ति से पर्यावरण संरक्षणः-नैतिकपूर्ण स्वस्थ और सादा जीवन जीने के लिए (सप्तव्यसन) मदिरा, माँस, शिकार, चोरी, जुआ, वेश्या गमन, पर स्त्री सेवन आदि का त्याग भारत में जैनधर्म का मूल सिद्धान्त है। मदिरा सेवन से भाव प्रदूषण होता है। मदिरा तैयार करने में जल, वायु, वनस्पति आदि प्रदूषित होते है। मांस भक्षण से जीवों की हत्या होती है, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य खराब होता है। जलचर जीवों की हत्या से जल प्रदूषण, पक्षी की हत्या से वायु प्रदूषण और स्थल चर जीवों की हत्या से स्थल प्रदूषण बढता है। शिकार व्यसन में भी माँस भक्षण की तरह सभी दोष पाये जाते हैं। पर स्त्री गमन, वैश्यागमन से शारीरिक एवं मानसिक रोग के साथ सामाजिक प्रदूषण होता है। इसी प्रकार चोरी, जुआ, आदि से भी मानसिक, आर्थिक, और सामाजिक प्रदूषण फैलता है। तम्बाखू, बिड़ी, गाँजा, भांग, सिगरेट, अफीम आदि से आर्थिक, शारीरिक, मानसिक और वायु प्रदूषण होता है।

(5) ब्रह्मचर्य से पर्यावरण संरक्षणः-ब्रह्मचर्य का भारतीय संस्कृति में महत्व पूर्ण स्थान है, ब्रह्मचर्य से जन संख्या वृद्धि पर नियंत्रण रक्खा जा सकता है, जिससे खाद्य समस्या, आवास निवास समस्या के साथ-साथ मनुष्य द्वारा उत्सर्जित मल-मूत्र अपशिष्ट आदि पदार्थो से जल वायु मिट्टी प्रदूषण होता है। घनी आबादी के कारण प्राण वायु की कमी होती है, तथा कृत्रिम गर्मी बढने से पर्यावरण का संतुलन बिगड़ता है। पर्यावरण संरक्षण के लिए ब्रह्मचर्य का पालन जरूरी है। मेरे शोध पत्र का संक्षेप सार। निष्कर्ष यही है कि पर्यावरण की चर्चा के साथ अहिंसादिव्रत, समिति, गुप्ति, जीव दया, संयम, समता, ऋजुता, मृदुता आदि उत्कृष्ट भावों का होना परम अनिवार्य है। आज से लाखों वर्ष पहले हमारे तीर्थंकर, ऋषि, मुनि, प्रज्ञा पुरुषों ने आचार-विचार व्यवहार में संयम, करुणा, जीव-दया इत्यादि प्रमुख नियमों पर बल

दिया था, इसी बात को आचार्य महाप्रज्ञ जी ने अपनी पुस्तक ''जैन धर्म अर्हत् और अर्हतायें'' में एक स्थान पर स्पष्ट किया है कि सृष्टि-संतुलन शास्त्र आधुनिक विज्ञान के लिए विज्ञान की एक नई शाखा हो सकती है लेकिन एक जैन के लिए यह सिद्धान्त लाखों वर्ष पुराना है। सृष्टि संतुलन के लिए भगवान् आदिनाथ से लेकर भगवान् महावीर ने जो सृष्टि संतुलन का सूत्र दिया वह आज भी महत्वपूर्ण है। अगर हम उनके बताये सिद्धान्त सूत्रों का अनुकरण, अनुसरण करे तो विश्व व्यापी पर्यावरण की विकराल समस्या ही नहीं वरन् अन्य अनेक समस्याओं का समाधान हो जायेगा। हमारा समाज, राष्ट्र विश्व भगवान् महावीर के सिद्धान्त सूत्रों पर चल कर ही समृद्ध, समुन्नत बन सकता है।

नित्य शान्ति-आनन्ददायी
आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुवर का वैश्विक गुरुकुल

शान्ति अनुभवकर्त्ता-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चालः ये शहर है अमन का...)

ये संघ है, कनक का...2/(गुरुकुल है विश्व का)...
यहाँ आनन्द अनुभूति निराली....
यहाँ पे सब शान्ति-शान्ति है...3...
ज्ञान की क्रान्ति-क्रान्ति है.../भावों की क्रान्ति-क्रान्ति है...
गुणों की यहाँ क्रान्ति-क्रान्ति है.../आत्म संक्रान्ति है...(स्थायी)...
यहाँ सत्य है...यहाँ साम्य है...यहाँ सुख-अमृत है...
यहाँ मृदुता...यहाँ ऋजुता...यहाँ सहज-भाव है...
यहाँ ज्ञान है...विज्ञान है...यहाँ सेवा-दान है...
यहाँ प्रेम है.. वात्सल्य है...यहाँ सबका मान है...ये संघ है...(1)...
यहाँ मैत्री है...प्रमोद है...कारुण्य भाव है...
विपरीत वृत्ति में भी...माध्यस्थ भाव है...

हर जीव में...जिनेन्द्र का...दर्शन महान् है...
सहानुभूति...सम्वेदना...समानुभूति भाव है...ये संघ है...(2)...
यहाँ शोध है...यहाँ बोध है...नवाचार नित्य है...
यहाँ चर्चा है...यहाँ वार्त्ता है...वेबिनार/(स्वाध्याय) नित्य है...
वैज्ञानिक संगोष्ठियाँ...शुभ सम्वाद है...
यहाँ प्रेरणा...प्रोत्साहन...श्रेष्ठ ज्ञानदान है...ये संघ है...(3)...
प्राचीन से...आधुनिक...सर्व विधा का ज्ञान है...
कनकनन्दी...आचार्य देव...विश्व गुरुराज हैं...
महालेखक-कविशेखर...वैज्ञानिक सन्त हैं...
महाअध्येता...अध्यापक...प्राज्ञ 'सुविज्ञ' हैं...ये संघ है...(4)...

योगेन्द्रगिरि, दि. 9/2/2025, रात्रि 9.19

शान्त-सौम्य-परिणामी ब्रह्मचारी सोहनलालजी दादाजी

-मुनि आध्यात्मनंदी

विगत 25 वर्षों से आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव के संघ में रहकर समस्त कार्य को स्व प्रेरणा से संभालने वाले श्रीमान् ब्रह्मचारी सोहन लालजी देवडा (दादाजी) का 85 वर्ष की उम्र पूर्णकर दिनाङ्क 21 जनवरी 2025 को प्रातः आचार्य श्री कनकनन्दी जी का दर्शन व आशीर्वाद लेकर अपने कक्ष में आकर सामायिक में बैठे-बैठे, ध्यान करते-करते देवलोक गमन हुआ। अतिहि सुन्दर बिना किसी शारीरिक पीडा के अपनी देह को त्याग दिया। ऐसी शुभ समाधि मरण अत्यन्त पुण्यशाली जीव को ही प्राप्त होता है। ब्रह्मचारी सोहनलाल जी बहुत ही शान्त, सौम्य परिणामी थे। सादा जीवन उच्च विचारी संतोषी सेवा भावी थे। आप सरकारी पाठशाला में गणित के अध्यापक थे। सरकारी सेवा निवृति के पश्चात् आप आचार्यश्री के संघ से सन् 2000 से जुड गये।

आप देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति सेवा में तत्पर रहे। वे नित्य गुरुदेव की

आहार चर्या के पश्चात् आहार अनन्तर प्रसाद ग्रहण करते थे। दिन में एक बार ही आहार ग्रहण करते थे। हित-मित-प्रिय भाषी, दोष परिहारी होने से आबाल-वृद्ध सभी के प्रिय दादाजी थे। सभी के साथ स्नेह पूर्ण सद् व्यवहार करते थे। आप गुणग्राही-परामर्शदाता, भद्र परिणामी व्यक्तित्व के धनी थे। आपने आचार्यश्री के ग्रन्थ प्रकाशन सम्बन्धी समस्त कार्य को ईमानदारी से स्व कर्त्तव्य समझकर 25 वर्षों तक पूर्ण निष्ठा व सफलता पूर्वक (निभाया) सम्भाला। किसी से भी ईर्ष्या घृणा-निन्दा-चुगली-अपमान नहीं किया। देश-विदेशों के भक्त-शिष्यों से आने वाली सूचनाओं को सुनना, प्रति उत्तर देना आदि के कार्य को आचार्यश्री ने उनकी कार्य कुशलता और योग्यता देखकर उनको करने का अधिकार दिया था।

ब्रह्मचारी जी ने अपनी दीक्षा के लिये निवेदन (श्रीफल) भेट भी कर दिया था। दीक्षा का मुहूर्त भी निकाला गया था, लेकिन कुछ कारणवश आपकी दीक्षा नहीं हो पाई। फिर भी अन्त समय में समाधि पूर्वक देह त्याग स्वर्ग-लोक प्रयाण किया।

संघ में रहकर धर्म-ध्यान में लगे रहते थे। आप श्रावक धर्म दान-पूजादि का नित्य पालन करते रहे। गुरु सानिध्य प्राप्त कर उनके ज्ञान व भावों में वृद्धि और आत्म विशुद्धि भी बढ़ती गई। यह सब उनके 25 वर्ष के दीर्घकाल तक आचार्य श्री कनकनन्दी जी का सानिध्य व सेवा का ही फल था कि जिसके प्रतिफल में वे अन्तिम समय तक स्वस्थ्य रहे, बिना किसी शारीरिक-मानसिक आधि-व्याधि के गुरु चरणों में समाधिपूर्वक देवलोक गमन हुआ। मेरा ब्रह्मचारी सोहनलालजी से सन् 2005 उदयपुर नरसिंहपुरा समाज के नोहरे में वैज्ञानिक धर्माचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव के वर्षाकालीन चातुर्मास में प्रथम बार सम्पर्क हुआ। मैं, मुनि आध्यात्मनंदी भी 2005 से गुरुदेव के संघ से जुडा। ब्रह्मचारीजी और मैं साथ-साथ रहकर साधुओं को आहार देकर साथ-साथ आहार करते थे। कभी-कभी वे अपने निवास स्थान भी ले जाते थे। सन 2006 में हम दोनों आचार्यश्री के साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु श्रवणबेलगोल महामस्तकाभिषेक में साहित्य का स्टाल भी लगाया। वहाँ साधुओं को आहार देते और वहीं साथ-साथ आहार करते थे। हम वहाँ लगभग दो मास तक

साथ रहे और उसके पश्चात् वहाँ आसपास के तीर्थ क्षेत्रों की यात्रा करके वापस आचार्य के पास आ गये। मेरी दीक्षा 2006 में हो गई तब भी हम दोनों साथ साथ एक ही कक्ष में रहे। मुझे उनका सानिध्य प्रायः 20 वर्ष तक मिला! ऐसे ब्रह्मचारी श्री सोहनलालजी देवडा की सुसमाधि पर मैं मुनि आध्यात्मनन्दी अपनी संक्षिप्त विनयांजली प्रस्तुत कर उनके जैसे सद्गुण मुझे भी प्राप्त होवे। मेरा भी गुरु चरण-शरण में समाधि मरण होवे ऐसी शुभ भावना के साथ-मुनि आध्यात्मनंदी।

-योगेन्द्र गिरि दि. 14-2-2025 रात्रि 9:25

अलौकिक ब्रह्मचारी : सोहन दादा

ॐ नमः। ॐ शांति। सोहन का आत्म तत्त्व, आत्म तत्त्व में विलीन हो गया व नश्वर शरीर अग्नि तत्व में विलीन हो गया। वह 21/1/2025 मंगलवार की प्रातः कालीन बेला, मैं आर्यिका सुवत्सलमती नित्य की भांति मुनिसुव्रतनाथ भगवान् के दर्शन कर स्वाध्याय भवन में संघस्थ ब्रह्मचारी सोहन दादा से मिलने गई। दादा जी ने कहा माताजी मुझे कुछ अस्वस्थता लग रही है। मैंने उन्हें सरस्वती मंत्र सहित आशीर्वाद दिया। उनका सौभाग्य था जो गुरु देव का कक्ष खुला था। दादा ने गुरु देव से मंत्र सहित आशीर्वाद प्राप्त किया। गुरु देव ने कहा अमृत धारा लगाकर शवासन से लेट जाओ दीर्घ श्वास लेने से स्वस्थता लगेगी। उन्होंने गुरु आज्ञानुसार अमृत धारा लगाकर लेट गये। मैं भी अपना जिनवाणी का कार्य करने लगी। लगभग 40 मिनट तक भक्तामर स्तोत्र पाठ सुनते हुए कार्य किया। पुनः दादा के पास आई तो दादा ने कहा कुछ अधिक मात्रा में कफ निकल रहा है। मैंने कहा दादा वैद्य को बुलाती हूं। दादा ने कहा नहीं अपने गुरुदेव ही महावैद्य है। कफ निकलने से सब ठीक होगा। मैंने सहस्रनाम का जाप शुरू किया तो दादा ने कहा मैं भी जाप कर रहा हूं। वे ध्यान मुद्रा में बैठकर जाप करने लगे। मुझे शौच जाना था सो मैंने कहा दादा आप जाप सुनो मैं आती हूं। दादा उत्तर दिशा की ओर मुंह करके आसन लगाकर बैठे थे इस मनुष्य पर्याय के 85 वर्ष के अंतिम क्षण तक बोलते हुए मात्र एक समय में स्वर्ग पधारे

अर्थात् इस नश्वर शरीर को छोड़कर आत्मा, देव पर्याय में गई। वे अंतर मुहूर्त में स्वर्ग में देव बन गए। ऐसा इसलिए की तत्वार्थ सूत्र में सूत्र है 'स्वभाव मार्दवं च' सरल स्वभावी जीव स्वर्ग में जाता है। ब्रह्मचारी सोहन दादा मृदु स्वभावी, सहज, सरल, अयाचक, निस्पृह, निस्वार्थ गुरु भक्त, वृद्धावस्था में भी जिनवाणी उपासक, कर्मठ, सतत जिनवाणी व गुरु सेवा में रत रहते। एक युवा से भी अधिक सक्रिय देव शास्त्र गुरु सेवा में लगे रहते थे। वे एक सफल प्रबंधक, समन्वय कारी, मृदु भाषी, गुरु चरणों में समर्पित, हित-मित-प्रिय भाषी, समस्या समाधान कर्ता थे। प्रत्येक परिस्थिति को धैर्य से, बुद्धि कौशल्य से सुलझाते थे। उनके हमेशा के वाक्य थे, दादा कैसे हो, आनंदमंगल-परम सुखम्, धन्य हो गई नगरी, जो होगा अच्छा ही होगा। वैसा ही हुआ-जो साधुओं के लिए भी कष्ट साध्य है ऐसे अंतिम क्षण तक निर्विकार भाव से शांत परिणामों से समाधि में लीन हो गए। सोहन से सोहम् की यात्रा पर निकल गए। एक निर्विकल्प समाधि का आदर्श स्थापित कर गए। यह सब गुरुदेव (आचार्य कनकनंदी) के स्व का बोध कराने से साध्य हुआ है। ऐसी सजगता, सहजता से, शांत परिणामों से देव-शास्त्र- गुरु की सेवा अंतिम समय तक मैं भी कर पाऊँ ऐसा मैंने गुरुदेव से आशीर्वाद लिया है। मेरी भी गुरु चरणों में बोधि समाधि हो ऐसी भावना करते हुए देव शास्त्र गुरु सेवक।

-आर्यिका सुवत्सलमती माताजी।

आत्मानुशासी, गुरु भक्त, निस्वार्थ सेवा, जिनवाणी उपासक ब्रह्मचारी सोहन दादा

अथाह ज्ञान के भंडार, वात्सल्य भावी, उदार आत्मानुशासित, अयाचक, पापभिरू आचार्य कनकनंदी गुरुदेव ससंघ के सानिध्य में योगेन्द्र गिरि पर 21/1/2025 मंगलवार की प्रातः कालीन बेला में देव शास्त्र गुरु सेवक कर्मठ निस्पृह निस्वार्थ जिनवाणी उपासक ब्रह्मचारी सोहन दादा की साधुओं को भी कष्ट साध्य ऐसी सामायिक ध्यान मुद्रा में शांत परिणामों से गुरु से आशीर्वाद प्राप्त कर सुसमाधि मरण

हुआ। दादा जी हित मित प्रिय भाषी, पर निंदा से दूर रहने वाले, चारों प्रकार का दान करने वाले थे। वे संघ के सभी का सब दृष्टि से वात्सल्य भाव से ध्यान रखते थे। जो कनकनंदी गुरुदेव की निश्रा में रहता है इनकी कृपा दृष्टि से, वात्सल्य भाव से ओतप्रोत होता है। जो गुरु देव के अनुशासन में रहता है उसका उद्धार अवश्य होगा ही, गुरु सेवा मुक्ति पथ का मेवा पाथेय है।

गुरु सेवा ही शिष्य के लिए श्रेष्ठ धर्म है।

गुरु चरणों में समर्पित रहकर आत्मानंद में मस्त व्यस्त आनंदित रहते हुए दादा जी जैसा मेरा भी निर्विकार भाव से समाधि मरण हो यही गुरु चरणों में मेरा नमन,वंदन,कोटिशः नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु। **क्षु. भक्ति श्री**

आदर्श व्यक्तित्व के धनी ब्रह्मचारी सोहनलालजी देवड़ा

संघस्थ ब्रह्मचारी राजमल जैन (लोलावत) (सौम्यनन्दी) योगेन्द्रगिरी सागवाड़ा दि. 24.1.2025

न संस्तरो भद्र! समाधि साधनं न लोकपूजा न च संघमेलनम्।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनम्।।

धर्म दर्शन सेवा संस्थान के मैं तथा श्री सोहनलालजी देवड़ा जून सन् 2000 में सदस्य बने थे। उसके पश्चात् मेरा सम्पर्क उनसे निरन्तर रहा। 14 नवम्बर सन् 2023 से वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दी गुरुदेव के संघ में मैंने प्रवेश किया, तब से हम दोनों का सम्बन्ध ऐसा रहा कि बह्मचारी श्री सोहनलालजी मुझे अपना लद्यु भ्राता मानने लगे थे, तथा कहा करते थे कि अभी मेरा भाई तो दूर है आप ही समीपस्थ हो दुःखदर्द में आप ही काम आओगे। हम दोनों ही ब्रह्मचारी सागवाड़ा देवदर्शन के लिए साथ ही जाते थे। ब्रह्मचारीजी का परिचय यहाँ पर विशेष था तो वे मेरा ब्रह्मचारी राजमल का परिचय किसी से भी करवाते तो कहते थे कि ये मेरे साथी भावी मुनिराज है तथा मैं क्षुल्लक दीक्षा लूँगा। मैं कहता था कि ऐसा परिचय करवाना उचित नहीं है। उदयपुर के शास्त्रभंडार से जो भी शास्त्र आये

उनको क्रम से आलमारियों में व्यवस्थित विराजमान करना तथा उनका संरक्षण का कार्य करते हुये मुझे समझाते रहते थे कि भविष्य में मेरे अनुपस्थित रहने पर आप क्रमानुसार आचार्य श्री के ग्रंथ मंगवाने पर देना। ग्रंथ का लेखा-जोखा भी बताया करते थे। इसमें प्रामाणिकता का ज्ञान कराया। इस प्रकार जिनवाणी सेवा में मैंने भी पूर्ण सहयोग दिया। रात्रि को ज्यादा समय बैठक न करने के कारण 9.30p.m. तक विश्राम करते थे जो मुझे शास्त्र वाचन के लिए कहते थे, कि मैं श्रवण कर रहा हूँ, इस प्रकार स्वाध्याय में रूचि होने के कारण सुनते थे। सरल स्वभावी होने के कारण आचार्यश्री की रात्रि में सेवा व वैयावृत्ति में आने वालो से बड़े ही स्नेह के साथ वार्तालाप करते थे तथा उनकी कुशलक्षेम पूछते थे। आवश्यकतानुसार उनको उचित राय भी देते थे। सभी शिष्य उन्हें ''दादाजी'' वंदना शब्द से सम्बोधित करते थे।

दिनाक 21 जनवरी 2025 मंगलवार को नित्य क्रिया से निवृत होकर आचार्यश्री के दर्शन व आशीर्वाद प्राप्त करके ब्रह्ममुहूर्त में सामायिक करने के लिए उत्तराभिमुख बैठे हुये स्वर्ग सिधारे। मैं उनके शान्त, निर्मल व समता परिणाम से प्रेरित होकर ऐसी भावना भाता हूँ कि मेरी स्वयं की समाधि ऐसे ही समता व निरोग अवस्था से उत्कृष्ट स्थिति में होवे।

सोहन से ''सोऽहं'' हुए ब्रह्मचारी दादाजी

-ब्र. मंजू दीदी

ब्रह्मचारी दादाजी सन् 2000 से सेवा निवृत्ति के बाद विश्व धर्म प्रभाकर वैज्ञानिक धर्माचार्य कलिकाल सर्वज्ञ कनकनंदी गुरुदेव के सानिध्य में आये। उन्होंने अपना जीवन गुरु चरणों में समर्पित कर दिया। मैं मंजू जैन 2010 से दादाजी के सम्पर्क में आई। दादा 25 वर्ष से श्रीसंघ की निस्वार्थ भाव से सेवा भक्ति कर रहे थे। वे मिलनसार, स्वाध्याय प्रेमी, सेवा भावी, उदार, आत्मानुशासित, अयाचक, पापभिरू, विश्वास पात्र, कर्मठ सतत जिनवाणी की सेवा मनोभाव से करते थे। उस सेवा का फल है कि उनके देह परिवर्तन के बाद अर्थात् स्वर्ग गमन होने पर उनकी प्रशंसा में

दो कविताओं की रचना गुरुदेव ने कर दी। आप हित मित प्रिय भाषी थे। सामान्य सूचना देने में भी आपको संकोच होता था कि कहीं दूसरे का मन दुखी न हो। आप सतत शांत परिणामों से शास्त्र व गुरु सेवा में रहकर आत्मानंद में मग्न रहते। लेन देन में एकदम परफेक्ट थे। अर्थव्यवस्था आपने जीवन के अंतिम दिन तक सतर्कता से सम्भाली। 85 वर्ष की आयु होने पर भी आप शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक दृष्टि से एकदम स्वस्थ थे। इसलिए अंतिम क्षण तक सजग रहकर इस नश्वर देह का त्याग किया। ऐसी सुसमाधि मरण मेरा भी हो यही भावना भाती हूं। गुरुदेव के लगभग 300 ग्रंथों के सृजन में दादाजी का पूर्ण सहयोग रहा। आपकी योग्यता को देखकर संघ संचालन, व्यवस्था के अनेक अधिकार आपको दिये थे। आप श्रेष्ठ जेष्ठ शिष्य रहे। दीक्षा का मुहूर्त भी गुरु देव ने निकाल लिया था। 21/1/2025 मंगलवार की प्रातः कालीन बेला में गुरु से मंत्र सहित आशीर्वाद प्राप्त कर आपने सामायिक ध्यान मुद्रा में, शांत परिणामों से यह नश्वर शरीर को त्यागकर क्षण भर में उर्ध्व गमन किया। ऐसी उत्तम सुसमाधि गुरु सेवा व समता भाव का परिणाम है। **ॐ शांति**

श्रेष्ठ ब्रह्मचारी सोहनलाल दादाजी का व्यक्तित्व एवं उनके चरणों में मेरी विनयाजंलि

-बा.ब्र. वर्ण जैन

(चालः- दिल है छोटा सा, मंगल भवन अमंगल हारी...)

देखो-देखो-देखो व्यक्तित्व देखो...सोहन ब्रह्मचारी जी के गुणों को देखो...।
सीखो-सीखो-सीखो इनसे सीखो...गुरु-जिनवाणी की सेवा करना सीखो..।।(स्थायी)
सेवा-निवृत्ति पश्चात मोक्ष-मार्ग अपनाया...कनकनन्दी सूरीवर के चरणों में आए...।
अपना शेष जीवन समर्पित किया...शास्त्र व गुरु सेवा का संकल्प लिया...।। (1) देखो...
संघ में रहकर धर्म-ध्यान वे करते...दान-पूजादि श्रावक के कर्तव्य करते...।
गुरु आहार पश्चात् ही भोजन करते...शेष प्रसाद को वे ग्रहण करते...।। (2) देखो..
कनकनन्दी गुरुवर के साहित्यों की...व्यवस्था-प्रकाशनादि में सहयोग करते...।

अर्थ-व्यवस्था आदि भी सम्भाले...पूर्ण निष्ठा से वे कार्य करते...।। (3) देखो...
सभी जन उन्हे 'दादाजी' कहकर पुकारे....दादा से बढ़कर सभी को प्रेम वे देते...।
उनके पास जाने से आनन्द आता...'आनन्द मंगल परम सुखम्' सूत्र उनका था...।।
(4) देखो...
गुरु चरणों में रहने से ज्ञान उनका बढ़ा...ज्ञान के साथ आत्म-विशुद्धि भी बढ़ी।
गुरुवर से सप्त-प्रतिमा धारी...गुरु चरणों में दीक्षा की भावना भाई।। (5) देखो..
भले दीक्षा नहीं ले पाए...परन्तु समता पूर्वक समाधि पाए...।
समाधि ही साधक का अन्तिम लक्ष्य...जिसे प्राप्त कर वे मोक्ष को टिकिट पाए।।
(6) देखो...
समाधि से पूर्व गुरु का आशीष लिया...अन्त में समाधि से स्वर्ग-पुर पाया...!
स्वर्ग से आकर 'मनुष्य' भव पाओ....मुनिराज बनकर मोक्षमहल को जाओ...(7)देखो....
गुरु सेवा फल स्वरूप समाधि को पाया...गुरु ने आपको अपना आदर्श माना...।
गुरु शिष्य का संबंध सदा ही रहेगा...तव सम सम्यक् शिष्य मैं भी बन पाऊँ।। (8) देखो...
मैं आपका धर्म का पोता हूँ...आप भी मेरे धर्म के दादा है...।
ये सम्यक् संबंध सदा चलेगा...आपका ध्यान मेरे मन में रहेगा...।। (9) देखो...
आपने मुझे बहुत अनुभव दिया...नैतिक व व्यवहारिक ज्ञान भी दिया...।
कृतज्ञता का भाव मुझमे आया... इसलिए 'वर्ण' ने काव्य रचाया...।। (10) देखो....
आपके गुणों को मैं शीघ्र ही पाऊँ..आप मोक्ष पाओ ऐसी भावना भाऊँ...।
अश्रु पूर्ण विनयाञ्जली समर्पित करूँ...'वन्दना दादाजी' कहकर काव्य पूर्ण करूँ...।।
हो...ऽऽऽ...श्रेष्ठ समाधि को आपने पाया...ऽऽऽ मोक्ष-महल का द्वार है खोला...
जय ब्रह्मचारी सोहनलाल दादाजी...।। (12)
हो...ऽऽऽ...तव गुण गाकर आनन्द लिया...ऽऽऽ... संक्षेप में यहाँ वर्णन किया...
जय ब्रह्मचारी सोहनलाल दादाजी...।। (13)

नवग्रह तीर्थ क्षेत्र वरुर कर्नाटक, दि-23/01/2025 गुरुवार-9.30
समाधि-21/01/2025, ब्रह्ममुहूर्त प्रातः योगीन्द्रगिरि सागवाड़ा

अनूठे ब्रह्मचारी सोहनलाल जी (दादा)

जन जन के प्रिय दादाजी अब हमारे बीच में नहीं है, परन्तु फिर भी वह सबके हृदय में अपना स्थान बनाए हुऐ हैं। मैं दादाजी को तब से जानती हूँ, जब से वे गुरुदेव के सम्पर्क में आए थे।

वे महान् गुरु के शिष्य थे और गुरुदेव के ही गुणों का उन्होंने अनुकरण किया, और इस भौतिक जगत् में वह भी गुरुदेव के समान सभी आडम्बर, दिखावा और प्रपंच आदि सभी से दूर रहे और गुरुदेव की आज्ञानुसार ही सभी कार्य करते थे, इसीलिए वह 85 वर्ष की आयु में भी माँ जिनवाणी की सेवा, संघ में सभी के लिए आवश्यकतानुसार औषधि देना और आय और व्यय का पूरा हिसाब किताब रखना, अपनी सभी जिम्मेदारी पूर्णतया सुचारू रूप से निभाते थे और सभी कार्यों को सुव्यवस्थित रूप से करना उनकी दिनचर्या थी जिसे उन्होंने अन्तिम समय तक पूर्ण ईमानदारी के साथ किया। प्रतिदिन भ्रमण में जाना और सभी मंदिरों के दर्शन करना यह भी उनकी नित्यप्रति की दिनचर्या में था, पूजन करना और गुरुदेव को आहार करवा कर शेषान्न को प्रसाद रूप में ग्रहण कर स्वयं आहार करते थे और स्वाध्याय और तीन समय की सामायिक और प्रतिक्रमण करना यही उनकी दिनचर्या रहती थी। दादाजी ने 21 जनवरी 2025 को भी देहत्याग पूर्व अपने नित्यकर्म किए थे। वह सभी के गुण आयु के अनुरूप ही व्यवहार करते थे, बच्चों के साथ बच्चों जैसा व्यवहार और बड़ों के साथ बड़ो जैसा व्यवहार वे करते थे और सभी कार्य मर्यादानुसार ही करते थे। सदैव हँसते मुस्कराते रहते थे और सौम्य प्रकृति के थे, कभी किसी पर रोष नहीं करते थे। जब दादाजी योगेन्द्रगिरि पहाड़ से दर्शन करके नीचे आते थे तो मैं यही कहती थी कि दादाजी गाँधीजी की तरह लगते हैं क्योंकि दुबले पतले धोती दुपट्टा पहने हुए छोटा कद बिल्कुल गाँधीजी के समान ही प्रतीत होते थे। पूरे संघ में सभी उन्हें दादाजी कहकर पुकारते थे। गुरुदेव के पास उदयपुर में 25 वर्ष पूर्व वह अपनी सेवा निवृत्ति के बाद आए थे, तभी से उन्होंने निरन्तर माँ जिनवाणी की अटूट सेवा की है। हम जब भी गुरुदेव के चरणों में आते थे तब गुरुदेव का बहुत छोटे छोटे

गाँवों में प्रवास रहता था, हमें पहुँचने में बहुत असुविधा होती थी, तब ब्रह्मचारी दादाजी स्वयं हमें लेने के लिए आते थे। वह सदैव से गुरुदेव के आज्ञानुवर्ती रहे हैं।

वह स्वयं भी कितने पुण्यात्मा हैं। जिनको गुरुदेव ने 34-36 घंटों तक स्मरण करके उनका गुणानुवाद किया और सभी ने भावना की कि जैसी समाधि दादाजी की हुई उसी प्रकार समाधि हमारी भी हो । गुरुदेव का कहना है कि इस प्रकार की समाधि की भावना बड़े-बड़े आचार्य भी करते हैं। ऐसी दुर्लभ समाधि विरलों को ही प्राप्त होती है। दादाजी ने अपने अन्तिम समय में भी किसी से भी किसी भी प्रकार की कोई वैयावृत्त्य नहीं करवाई। बस वह स्वयं गुरुदेव के पास आकर उनसे आशीर्वाद पाकर सोहन से सोऽहं हो गए। गुरुदेव ने उन्हें यह आशीर्वाद दिया कि आप सोऽहं से निकट भव में ही 'अहं' बने। इस प्रकार का आशीर्वाद देते हुए गुरुदेव ने अपने शिष्य के प्रति विनयांजलि दी। ऐसे महान् गुरु भी महान् शिष्यों को ही प्राप्त होते है।

दादाजी की स्मृति भी सभी के हृदयों में युगों-युगों तक रहेगी इन्हीं भावनाओं के साथ। 'ॐ शांति' शांति शांति। **स्मृति में संघस्था वीणा जैन**

दादाजी ब्रह्मचारी सोहनलाल जी के पुण्य स्मरण

पंडित-कीर्ति जैन

(गुरुदेव के आशीर्वाद से)

जय गुरुदेव, जय-जय-जय गुरुदेव...2...!!
कनकनन्दी की आंखों का तारा।
सोहनलाल ब्रह्मचारी निराला।। जय गुरुदेव

कनक गुरु संग के ब्रह्मचारी कहाएँ।
गुरु सेवा देख, जन-मन हर्षा ये।।
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि ना चाही।
इसीलिए निस्पृहीता व सरलता है आयी।।

समता में रहते निश प्रति दिन।
इसीलिए सामायिक में हो गये लीन।।
2000 सन् में घर, परिवार को त्यागा,
गुरु सेवा में फिर, चित्त है लागा।।

25 वर्ष तक सेवा की।
गुरु चरणों में श्रेष्ठ समाधि ली।।
अपेक्षा, उपेक्षा, प्रलोभन ना कीना...
छल कपट मायाचारी ना कीना...

औषध ज्ञान आहार दान कर, बने उपकारी,
दान पुण्य से बने, स्वर्ग के अधिकारी।।

आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव संघ के अनमोल रत्न

(ब्रह्मचारी सोहनलाल जी दादाजी)

पंडित-कीर्ति जैन

परमपुज्य वैज्ञानिक धमाचार्य श्री कनकनन्दी गुरुदेव के पावन चरणों में त्रयभक्ति पूर्वक नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु।

गुरुदेव के आशीर्वाद से हमारे प्रिय ब्रह्मचारी सोहन दादाजी के पुण्य स्मरण में जितना लिखु उतना कम है। वे महानतम गुणों के धारी थे। व्यवहारिक गृहस्थ जीवन में गणित के आध्यापक रहे, बहुत से विद्यार्थियों को लौकिक शिक्षा दी। इनकी पूर्व संस्कारो से अध्यात्म में रूचि रही है। जब वे सेवा निवृत्त हुए तब इनके देव-शास्त्र-गुरु की सेवा का प्रबल भाव था। लेकिन धर्म में हर जगह दिखावा, आडम्बर, प्रदर्शन से इनके मन को कहीं शांति प्राप्त नहीं हुई। लेकिन कहते है-भावना फलदायिनी और भावना भवनाशिनी ऐसा ही इनके जीवन में हुआ कि ऐसा योग मिला की आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव ससंघ का वर्षायोग उदयपुर में जब हुआ तो उथरदा निवासी श्रीमान् सोहनलालजी देवड़ा को गुरुदेव के दर्शन व सानिध्य प्राप्त हुआ और

गुरुदेव की चर्या व स्वाध्याय से, निस्पृहता, निराडम्बर से बहुत प्रभावित हुए। फिर उनके मन को, चित्त को शांति मिली और सन् 2000 में घर गृहस्थी छोड़कर अपना जीवन जिनवाणी सेवा व गुरु सेवा में लगा दिया और आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव संघ के ब्रह्मचारी सोहनलाल जी बनकर नये जीवन अर्थात् संयममय जीवन की शुरुआत हुई। सोहनदादाजी ने अपने व्यवहार से, अपने नीति-नियमों से, श्री संघ का ही नहीं अपितु सभी श्रावक व श्राविकाओं के लिए प्रेरणा व आदर्श साबित हुए। गुरुदेव द्वारा 400 से ऊपर ग्रंथों की प्रुफ रीडिंग, छपवाना, सारा हिसाब-किताब दादाजी पूर्ण समर्पणता के साथ जिनवाणी सेवा की और आहार दान, ज्ञानदान, औषध दान स्वयं की जो पेंशन आती थी उससे भी करते थे। कभी किसी श्रावकों से अपेक्षा उपेक्षा नहीं की। वे सबके प्रति सरलता व शांत मुद्रा में मुस्कान के साथ ही पेश आते। इनके चेहरे पर कभी गुस्सा नहीं देखा। प्रतिकुल स्थिति को अपने अनुकूल बना लेना इनका विशेष गुण रहा। गुरुदेव के आहार, विहार, निहार, प्रवास इस प्रकार सारी जिम्मेदारी सरल-सहज-समता भाव से अपने कर्त्तव्य का निर्वाहन करते, इनके संयमी जीवन में दो नियम का पूर्ण पालन किया-पहला नियम माँ जिनवाणी की सेवा और दूसरा गुरुदेव की आज्ञा का पालन करना। इसमें किसी प्रकार का प्रमाद नही करते थे। इसका प्रमाण रात्रि 12 बजे तक व प्रातः 4 बजे से गुरुदेव के ग्रंथों की प्रुफ रीडिंग करते, ब्रह्मचारी अवस्था में भी एक समय ही आहार वो भी गुरुदेव के आहार बाद जो प्रसाद बचता वह सन्तोष-शांति से ग्रहण करते और सबको प्रसाद अपने हाथों से देते। 2024 पारडा ईटीवार गांव में आचार्यश्री ससंघ का वर्षायोग हुआ और मैं 5 महीने उनकी सन्निधी में रहा। मुझे उनका बहुत वात्सल्य मिला। चातुर्मास की जिम्मेदारी मुझपर थी पर मेरी हर समस्या का समाधान गुरुदेव का आशीर्वाद व ब्रह्मचारी सोहनदादा थे। मुझे प्रेरीत करते प्रोत्साहन भी देते। साथ में रहते हुए दादाजी सोहनलालजी का विशेष गुण देखा की वो सुनी हुई बातों पर विश्वास नहीं करते, प्रत्यक्ष देखते व फिर गुरुदेव तक सुचना पहुंचाते। संघ में सभी साधुओं के औषधि का ध्यान भी यही रखते थे। गुरुदेव के विश्वास व श्रेष्ठ शिष्य होने

के कारण गुरुदेव ने संघ में ज्यादा अधिकार इनको दिया था, यही गुरुकृपा थी। इन्होंने कही बार दिक्षा के लिए गुरुदेव के चरणों में श्री फल भेंट किया पर ऐसा योग आने से पहले नियति को कुछ और भेट दादाजी को देनी थी, वो थी ''श्रेष्ठ समाधि''। ऐसी समाधि तो दुर्लभ व बिरले पुण्यात्मा को ही प्राप्त होती है। क्योंकि दादाजी ने सच्चे गुरु जो अनेकान्तावाद, स्याद्वाद का ही ज्ञान दिया करते है। जो पंथवाद, संतवाद से परे जैन दर्शन व आगम की महीमा का ज्ञान कराने वाले स्वाध्याय तपस्वी वैज्ञानिक धर्माचार्य श्रीकनकनन्दी गुरुदेव की असीम कृपा प्राप्त की। अपनी सेवा, समर्पण व पुरुषार्थ से, गुरुदेव की सेवा करते 25 वर्ष होते ही समय का चक्र चलते-चलते 21 जनवरी 2025 प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में अपने कक्ष में थे तब आर्यिका श्री सुवत्सलमति माताजी जिनवाणी लेने स्वाध्याय कक्ष में पहुँची तो दादाजी ने वंदामी कहते हुए बुलाया और कहा की आज सीने में थोडा दर्द का अभास हुआ। तो माताजी ने कहा की वेद्य को बुलाए तो दादाजी ने कहा की मेरे तो सबसे बडे वैद्य मेरे गुरुदेव हैं ऐसा कहते हुए आचार्य कक्ष की ओर चल पडे, इनका पुण्य तेज की गुरुदेव का कक्ष भी खुल गया और गुरुदेव के चरणों में नमोस्तु कहते हुए अपनी बात बताई तो गुरुदेव ने मंत्र सहित आशीर्वाद दिया और गहरी सांस लेने के लिए कहा और फिर दादाजी अपने कक्ष में उत्तर में मुख करके सामायिक में बैठ करके जाप करने लगे और जाप करते-करते ब्रह्ममूहूर्त में ही परमब्रह्म में लीन हो गए।

तब भी दादाजी के चेहरे पर वही तेज था। गुरुदेव ने शकुन विज्ञान के अनुसार दादाजी सोहनलालजी की समाधि को श्रेष्ठ समाधि बताया और स्वर्ग का अधिकारी पुण्यात्मा जीव बताया। दादाजी की समाधि की सुचना जैसे ही मिली सभी गुरु भक्त परिवार के आंखों में भावाश्रु प्रवाहित हो उठे। क्योंकि दादाजी के व्यवहार से सभी प्रभावित थे। आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव स्वयं भी अपने श्रेष्ठ शिष्य के स्मरण व वात्सल्य में भाव विभीर हो गये और दादाजी के गुणस्मरण में श्रेष्ठ कविता की रचना गुरुदेव ने की। सभी गुरुभक्तों के अनुरोध से दादाजी के गुणस्मरण में स्मरणिका छप रही है। उसमें सभी भाक्त कविता और लेख के माध्यम से अपने

भाव व्यक्त कर रहे है। इसी के अन्तर्गत मैंने (कीर्ति) ने दादाजी से गुणग्रहिता का भाव रखते हुए एक कविता और लेख लिखने का प्रयास किया। ये सब गुरुदेव की कृपा है। मैं आचार्य श्रीकनकनन्दी गुरुदेव के चरणों में त्रय भक्ति पूर्वक नमोस्तु करते हुए अपनी कलम को विराम देता हूँ। ''जय जिनेन्द्र जय गुरुदेव''

भीवंडी (पारडा ईटीवार) दोपहर 11 बजे से 1 बजे तक (30 जनवरी 2025)

विनम्र मृदुभाषी, अनुशासन प्रिय स्वर्गीय ब्रह्मचारी सोहनलालजी

अभिनव श्रुतकेवली, उपसर्ग विजेता, अनवरत श्रुतआराधक, कविशेखर, मनोविज्ञान के ज्ञाता, आचार्य कनकनन्दी के चरणों में शतशत वन्दन।

आज इस दुःखदघड़ी में ब्रह्मचारी सोहनलाल जी का देह परिवर्तन सुनकर विश्वास नहीं हुआ, उनकी दिवंगत आत्मा को शतशत नमन, वह जहाँ भी हो उनका मोक्षमार्ग प्रशस्त हो, पुनः मनुष्य भव, श्रावक कुल, उच्चगोत्र, दिगम्बर दिक्षा लेकर मोक्षमार्ग प्रशस्त करे, शुभभावना भाती हूँ, दासोऽहम् से सोऽहं पद प्राप्त कर अहं पद की प्राप्ति करे।

ब्रह्मचारी सोहनलाल जी ने सेवानिवृत्त होकर गुरुशरण ली। विगत 25 वर्ष तक अनवरत निस्पृही, निराडम्बर कनकनन्दी गुरु की सेवा की, विमलसागर गुरुदेव को भरतसागरजी ने नहीं छोड़ा, इसी प्रकार मेरे गुरुदेव को सोहनलाल जी ने नहीं छोड़ा, उनका आत्मविश्वास प्रबल था। यह एक अद्भुत बात है। इसका प्रमुख कारण गुरुदेव सम्पूर्ण विषयों के ज्ञाता है। उनका आभामण्डल सुरभित है उनके सानिध्य मात्र से शरण में आने वाला व्यक्ति आनन्दित हो जाता है, अभिव्यक्ति करने लगता है। गुरुदेव का वात्सल्य अद्भुत है।

ब्रह्मचारी सोहनलालजी सरल, मृदुभाषी, कुशल प्रबन्धक अर्थव्यवस्था में निपुण, साफ सुथरा लेखा-जोखा रखने वाले स्पष्टवादी थे। गुरुदेव के अनुशासन में चलना व उनके अनुरूप चलना दोनो क्रियाएँ सर्वश्रेष्ठ थी। मैं सोहनलालजी के

सम्पर्क में नन्दौड़ से आई। हमारे साथ भी उनका व्यवहार मृदु था, हर समस्या के समाधान वे थे गुरुदेव के आहार क्रिया में विशेष योगदान था। संघ का बहुत ध्यान रखते थे।

उन्होंने 'माँ सरस्वती' की बहुत सेवा की है। ग्रन्थ छपवाना, जिनवाणी का व्यवस्थित रख-रखाव करना आदि उनके विशेष गुण थे। उनमें बहुत रुचि रखते थे।

मेरे गुरुदेव ने सोहनलालजी 'आध्यात्मिक चरित्र' के उजागार हेतु सुन्दर कविताओं का लेखन किया है। यह इस बात का द्योतक है कि उनके हृदय में सोहनलाल जी समा गये है। गुरुदेव का शिष्य के प्रति कितना वात्सल्य है।

अन्त में मैं भी ब्रह्मचारी के गुणों का रसपान करूँ, गुरुदेव की शरण प्राप्त करूँ, अपना समाधिमरण करूँ, यही भावना भाती हूँ चरणों में शीश झुकाती हूँ, पूनः दिवंगत आत्मा को मुक्ति मिले।

भूतपूर्व शिक्षिका-'मधुबाला जैन'

आचार्यश्री के वैज्ञानिक शिष्यों द्वारा धर्म प्रभावना

ज्ञान विज्ञान प्रचार-प्रसार के विश्व केंद्र योगेंद्र गिरी अतिशय क्षेत्र सागवाड़ा से अंतरराष्ट्रीय वेबीनार में हमारे सागवाड़ा के गौरव नासा के वैज्ञानिक डॉ राजमल जी जैन सागवाड़ा मूल निवासी ने आचार्य श्री से दो महान् कार्यों के लिए आशीर्वाद लिया। पहला महान् कार्य सम्मेद शिखर जी की पवित्र भूमि में उनकी टीम द्वारा जेनेटोरियम Museum Hospital स्कूल मंदिर तारामंडल थिएटर जेनेटोरियम सिनेमा हाउस से भी बड़ी स्क्रीन सिनेमेक्स हाइब्रिड सिस्टम बनेगा जैनो का विस्तृत व्यापक म्यूजियम बनेगा इसके माध्यम से युवा पीढ़ी को जैन धर्म का व्यापक स्वरूप ज्ञात होगा। जैन धर्म प्राकृतिक धर्म है वैज्ञानिक धर्म है सिद्धांतिक धर्म हैं। जैन धर्म का उद्गम कैसे हुआ यह सब ज्ञात होगा। यह पांच स्टोरी का म्यूजियम बनेगा। प्रतिवर्ष तीन लाख लोग सम्मेद शिखर जी की यात्रा करने जाते हैं तो वह अवश्य इस म्यूजियम से और जेनोटोरियम से लाभान्वित होंगे। इस महान कार्य के लिए महान् आचार्य कनक नदी गुरुदेव का आशीर्वाद और मार्ग दर्शन लिया। इस कार्य के लिए उनकी टीम ने

14 एकड़ जमीन खरीद ली है यह प्रोजेक्ट 1400 करोड़ का है। इसकी कल्पना की गई है परंतु आचार्य श्री के आशीर्वाद से यह संभावना अवश्य क्रियान्वित होगी। डॉ. राजमल जी जैन ने आचार्य श्रीकनकनन्दी गुरुदेव को इस प्रोजेक्ट का आधार स्तंभ बनाया है। उनके ज्ञान का विश्व में कोई सानी नहीं है उन्होंने बताया कि गुरुदेव ने 400 पुस्तके जिन आगम के अनुसार लिखी है उनमें करोड़ो शब्दों का भंडार है उनके शब्दों को समझना भी हमारे लिए अति कठिन होता है क्योंकि हममें योग्यता नहीं है। आचार्यश्री के ज्ञान उनके शब्द भंडार को समझने की उनके सम्यक दर्शन सम्यक् ज्ञान तथा सम्यक चारित्र की एकता उनके उत्कृष्ट आचरण उनकी समता क्षमता आदि का गुणानुवाद करते हुए उन्होंने आचार्यश्री से प्रश्न भी किया की आदिनाथ भगवान की माता को जन्म के समय सामान्य महिलाओं की तरह प्रसव पीड़ा अधिक हुई होगी क्योंकि वह तो श्रेष्ठ उत्कृष्ट महान् बालक थे। जिस प्रकार सामान्य व्यवहार में हृष्ट-पुष्ट बालक की माता के प्रसव के समय अधिक पीड़ा होती हैं? आचार्य श्री के आधार पर माताजी ने बताया कि तीर्थकर भगवान की माता को सामान्य महिलाओं की तरह पेट बढ़ना, मासिक धर्म, प्रसव पीड़ा आदि कुछ भी कष्ट नहीं होता है। दूसरा प्रश्न भगवान का जन्म रात्रि 12:00 बजे ही होता है या अन्य समय भी हो सकता है मोक्ष सुबह में ही होता है या अन्य समय भी हो सकता है?

उसका भी आचार्यश्री के साहित्य के आधार पर माताजी ने बताया कि प्रत्येक तीर्थंकर का जन्म समय तथा मोक्ष समय अलग-अलग हो सकता है। Dr. Rajmal Ji ने बताया कि वह आचार्य श्री को आधार स्तंभ इसलिए बना रहे हैं कि यह प्रोजेक्ट श्वेतांबर दिगंबर तेरापंथ 20 पंथी सभी लोगों के लिए है। इस प्रोजेक्ट के लिए 10 मिनट की डेमो फिल्म बनाई जाएंगी। उसमें आदिनाथ भगवान के जन्म और गर्भ कल्याणक के संवाद बताए जाएंगे। उसके लिए आचार्य श्री की पुस्तक युग निर्माता भगवान् ऋषभदेव, गीतांजलि नंबर 8, 66 नं. पूजा गीतांजलि आदि पुस्तकों का आधार लिया जाएगा। राजमल जी ने अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए बताया कि सम्मेदशिखर जी की भूमि वंदनीय पूजनीय पवित्र है। वहाँ पर अनेक यात्री यात्रा करने

जाते हैं। यह श्रद्धा का तीर्थ है। यहाँ पर प्रतिदिन हजारो टन कचरा प्लास्टिक की बोतले आदि इधर-उधर फेंक कर पवित्र भूमि को अपवित्र कर रहे हैं। थोड़े दिन पूर्व ही डॉ राजमल जी टीम ने वहाँ पर जाकर प्लास्टिक इकट्ठा किया तो लगभग वह 5 टन था। उसको नीचे भी लाना मुश्किल था। उन्होंने वही पहाड़ पर डिस्ट्रॉय कर दिया लेकिन यहाँ तो प्रतिदिन कचरा इकट्ठा होता है अतः हमें अपनी भूमि को पवित्र रखने के लिए स्वयं को जागृत होने की आवश्यकता है। हम पहाड़ों पर गंदगी ना फैलाएं और पहाड़ों की प्राकृतिक सुंदरता को बनाए रखे यह हमारा परम कर्तव्य है। हम प्रकृति का दोहन करते हैं अनेक सूक्ष्म जीवों पर अत्याचार करते है उनको मारते हैं। इतने सूक्ष्म जीवों ने भी हम पर उग्र होकर के कोरोना के रूप में आक्रमण किया। फिर भी हम समझ नहीं पाए कि हमें प्रकृति की सुरक्षा किस प्रकार करनी है।

डॉ राजमल जी जैन का दूसरा कार्य वह, 5-6 महीने के लिए अमेरिका नासा शोध संस्थान में अपने वैज्ञानिक शोध कार्य के लिए जा रहे हैं। जैन धर्म का परचम फैलाने के लिए वह अनेक अलग-अलग स्थान कॉलेज यूनिवर्सिटी सामाजिक स्थान पर अपना लेक्चर प्रस्तुत करेंगे। जैन धर्म की प्रभावना वह अधिक से अधिक कर सके ऐसा उन्होंने गुरुदेव से मंगल आशीर्वाद लिया। विश्व वैज्ञानिक आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव ने अपने मंगल आशीर्वाद में कहाँ की मुझे आपकी भावनाएं भविष्य की योजनाएं सुनकर स्वयं पर तथा आपके ऊपर गौरव हो रहा है। मेरे शिष्य उदार भाव से समन्वयी दृष्टि से धर्म विज्ञान को लेकर विश्व कल्याण के लिए निस्वार्थ भाव से जो कार्य कर रहे हैं उसके लिए मेरा मंगल आशीर्वाद है। मेरा स्वप्न शकुन साकार हो रहा है। आपका भविष्य सफल हो, आपकी भावना फलीभूत हो, आत्मविश्वास से कार्य करें सफलता अवश्य तुम्हारे कदम चूमेगी। आचार्यश्री ने कहा कि तुम्हारी पूर्व भावित भावनाए विचार मूर्त रूप ले रही हैं। भावनाएं भाव तरंगों से पूरे ब्रह्मांड में फैल जाती है जिससे भावनाएं अवश्य भावित होती है। जिस प्रकार सूर्य उदय से

पूर्व लालिमा दिखाई देती है वैसे ही आपकी भावना भी अवश्य फलीभूत होगी। सभी दिगंबर श्वेतांबर तेरापंथ 20 पंथ सभी मिलकर के संगठित होकर स्वार्थ संकीर्णता से परे होकर के यह संगठित होकर स्वार्थ संकीर्णता से परे होकर के यह कार्य करें ऐसा मंगल आशीर्वाद गुरुदेव ने राजमल जी की टीम को दिया। आचार्य श्री द्वारा रचित कविता हे वैज्ञानिक धन्य हो तुम कितना शोध करते हो'' इस कविता के द्वारा सुवत्सलमती माताजी ने वैज्ञानिकों का स्वागत किया।

आचार्यश्री के प्राचीन विद्वान शिष्य आचार्य विद्यानंद जी गुरुदेव ने भी इस प्रोजेक्ट की अनुमोदना करते हुए आचार्य श्री द्वारा रचित पुस्तकों का मार्गदर्शन दिया तथा दिल्ली के पंडित जयकुमारजी, धरियावद के पंडित हंसमुख जी का भी सहयोग ले सकते हैं ऐसा कह कर इस महान् कार्य के लिए आशीर्वाद प्रदान किया।इस अवसर पर आचार्य श्री के नवोदित युवा शिष्य गुंजन जैन ने डॉ राजमलजी जैन के प्रोजेक्ट की अनुमोदना करते हुए कहां कि हम संपूर्ण वागड़ वासी आपके प्रोजेक्ट में सहयोग प्रदान करेंगे। हम बचपन से चाह रहे थे कि महाभारत, रामायण की तरह हमारे जैन तीर्थंकरों की फिल्म बने जिससे सभी लाभांवित हो तथा जैन धर्म की महिमा को समझ सके। वर्तमान में 95% युवा पीढ़ी भटक चुकी है अध्यात्म को नहीं समझ रही है। आपके इस भागीरथ प्रयास से सम्यक् दर्शन सम्यक् ज्ञान तथा सम्यक् चारित्र तीनों को बल मिलेगा, आपके उत्कृष्ट कार्य में हम भी सहभागी बने सभी युवा पीढ़ी आपके साथ में है। आचार्य श्री के दूसरे युवा शिष्य ललित कोठारी ने भी आपके प्रोजेक्ट की अनुमोदना करते हुए सभी प्रकार से सहयोग करने की भावना व्यक्त की। वेबीनार में उपस्थित सभी सहभागियों ने इस प्रोजेक्ट की अनुमोदना तथा प्रशंसा की। **-संकलन कर्ता विजयलक्ष्मी**

सन्तप्रवर आचार्यश्री कनकनन्दी श्रीसंघ की प्रगतिशील प्रभावना

(निराकांक्ष चातुर्मास-प्रवासों की अद्भुत श्रृंखला)

अनुमोदक-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

चालः आल्हा (बुन्देली)...

सन्तप्रवर कनकनन्दी...सरल-सहज श्री गुरुराज...
सर्व जीव हितकारी गुरुवर....जन-गण-मन में करे निवास...सन्तप्रवर...(स्थायी)...
जिनवाणी को वन्दन करके...कनक गुरु को करूँ प्रणाम....
स्वप्न-शकुन-लक्ष्य जिनके...निरन्तर हो रहे साकार...(1)
भक्त-शिष्य- आबाल-वृद्ध...वनिता आदि कर रहे हैं दान....
श्रद्धा-भक्ति-समर्पण से...वैयावृत्य-सेवा आगाज...(2)
निराकांक्षमय भावना-भक्ति...निदान रहित पुण्य प्रभाव...
समता-शान्ति-आनन्ददायी...हर (भव्य) जीवों में भरे उल्लास...(3)
कनक गुरु श्रीसंघ की महिमा...चातुर्मास की झड़ी लगाय...
जंगल-ग्राम-नगर में देखो...अपने प्रान्त में रहे बुलाय...(4)
विश्व ज्ञान विज्ञान केन्द्र...योगेन्द्रगिरि बन रहा प्रमाण...
सागवाड़ा की पुनर्वास कॉलोनी...अग्रगामी भारत में आज...(5)
सीपुर-नन्दौड़-चीतरी-भीलूडा...देश-प्रदेश के अनेक ग्राम...
आगामी चातुर्मास-प्रवास में...सेवा-दान से करे प्रभाव...(6)
प्रायः पाँच सौ (500) चौमासों का... ऐतिहासिक बना रिकार्ड...
अयाचकता-निस्पृहता का...सातिशय पुण्य प्रभाव...(7)
याचना-बोली-चन्दा-चिट्ठा...दबाव प्रलोभन का नहीं काम...
स्व-पर-विश्व कल्याणकारी...'सुविज्ञ' जन शीश नवाय...(8)

योगेन्द्रगिरि, दिन 4/4/2024, रात्रि 9.30

अंजनगिरी पंच कल्याणक का उद्बोधन
आचार्यश्री कनकनन्दीजी गुरुदेव के देश विदेश के शिष्यों द्वारा देश विदेश में धर्म प्रचार

संघस्थ ब्र. सोहनलाल देवडा

1. मंगलाचरण

2. परमपूज्य-गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव की जय

स्वाध्याय तपस्वी वात्सल्य मूर्ति वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की जय

आचार्य श्री देवनंदी जी गुरुदेव की जय

आचार्य श्री देवसेन जी गुरुदेव की जय

प्रज्ञायोगी आचार्य गुप्तिनंदी जी गुरुदेव की जय

समस्त आचार्यश्री संघ की जय

धर्मानुरागी महानुभावों-

मैं उस गुरु के प्रतिनिधित्व में आया हूँ जिस गुरू के प्रतिनिधि भारत के ही नहीं विदेशों के यहाँ तक कि विश्व धर्म सभा में प्रतिनिधित्व करते है, तथा धर्म के राजदूत बनकर जाते हैं। जो काम भारत के किसी भी दिगम्बर संघ से लेकर विश्व विद्यालय, केन्द्र सरकार, राज्य सरकार स्कूल व कॉलेज में नहीं हो रहा है। ऐसा काम निर्मोही, वीतरागी, एकान्त प्रिय, गाँव और जंगल में रहने वाले ऐसे आचार्यश्री का मैं प्रतिनिधित्व करने व प्रतिनिमोस्तु शुभ आशीर्वाद शुभकामना लेकर आया हूँ।

मंचासीन विराजित आचार्यश्री गुप्तिनन्दीजी व आर्यिका आस्था श्रीमातीजी के बार-बार सूचना के कारण मैं मेरे गुरु का संदेश लेकर आया हूँ।

आचार्यश्री गुप्तिनंदी जी गुरुदेव की भावना है कि मेरे गुरु की जो विश्व स्तर पर वैज्ञानिक दृष्टि से जैन धर्म की जो प्रभावना हो रही है जो कि प्रायः करके महाराष्ट्र दक्षिण भारत में ज्ञात नहीं है, उसको बताने जताने के लिये मुझे बुलाया है।

यहाँ मंचासीन प. पू. आचार्य श्री देवनंदी जी गुरुदेव, प.पू. आचार्य श्री गुप्ति नंदी जी गुरुदेव, आर्यिका आस्था श्री माताजी , 300 के लगभग मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक-क्षुल्लिका 25-30 आचार्यों, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारीणी शिष्यो के शिक्षा दिक्षा गुरु का मैं प्रतिनिधि ब्रह्मचारी हूँ।

ऐसे महान् गुरु का नाम आप जानना चाहेंगे! वे कौन है? उनका नाम है वैज्ञानिक धर्माचार्य आ. कनकनंदी जी गुरुदेव। आचार्यश्री का भले ही 13 प्रदेशों व महाराष्ट्र के कुछ भागों में विहार हुआ है, किन्तु उनका विहार इस क्षेत्र में नहीं हुआ है। आप सभी उनके परम भक्त है और समय-समय पर उनके दर्शन के लिये आते है, और साहित्य प्रकाशन में सहयोग दे रहे हैं। मैं ऐसे आचार्यश्री की ओर से द्वय आचार्य, एवं मुनि वृन्द को प्रति नमोस्तु, आर्यिका संघ, क्षुल्लक, क्षुल्लिका, ब्रह्मचारी को आशीर्वाद, उपस्थित सभी श्रावक, श्राविकाओं, कार्यक्रम भैया, ब्रह्मचारिणी बहिनों में भाग लेने वाले सहयोग देने वालों के लिए शुभकामना।

धर्म प्रेमी महानुभावों

[वर्तमान विज्ञान युग में मानव को जितनी आवश्यकता धर्म की है उतनी ही आवश्यकता विज्ञान की भी है। मानव को गति विज्ञान से मिलती है और धर्म उसे दिशा प्रदान करता है। अभी धर्म के पास दिशा है पर गति नहीं (पंगु है) जब कि विज्ञान के पास गति है किन्तु दिशा नहीं (अंधा है)। जीवन में गति नहीं हो तो जड़ता छा जाएगी और दिशा के अभाव में गतिशीलता जीवन में संकट खड़ा कर देगी।]

अतः जीवन में धर्म और विज्ञान का संतुलित समन्वय आज की सर्वोपरी आवश्यकता है। इस आवश्यकता को पूरी करने लगन और धुन के धनी दक्षता और क्षमता रखने वाले जिन्हे वैज्ञानिक धर्माचार्य के नाम से जाना जाता है वे बचपन से प्रखर बुद्धि प्रतिभा के धनी, ज्ञान के पुंज, सत्यानवेषी गागर में सागर को समाहित करने वाले सत्य, समता एवं शांति के उपासक जिन्होंने अपनी पैनी लेखनी के माध्यम से 200 गद्यात्मक एवं 50 पद्यात्मक ग्रंथों की रचना की है जिसमे विभिन्न विषयों यथा गणित, विज्ञान, दर्शन, राजनैतिक, न्याय, कानून, स्वप्न, शकुन-भविष्य

विज्ञान मंत्र, इतिहास आदि को आध्यात्मिक-मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, पर्यावरण एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से सभी विधाओं का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विश्लेषण कर प्राणीमात्र के लिये जीवनोपयोगी बनाया है।

परम पूज्य कवि हृदय, स्वाध्याय प्रेमी वैज्ञानिक धर्माचार्य कनकनंदीजी गुरुदेव का उद्देश्य साहित्य सृजन, संगोष्ठी शिविर (विभिन्न संस्थाओं) विश्व विद्यालयों, न्यायालयों, काराग्रह आदि में प्रवचन के माध्यम से प्रत्येक प्राणी की प्रतिभा का विकास करना, जन-जन के लिए आत्मकल्याण के मार्ग को प्रशस्त करना है।

आचार्यश्री केवल जैन धर्म को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से नहीं विज्ञान से भी आगे सिद्ध करके प्रायः 25 से 30 वर्षो से दिन में लगातार 2 घंटे से 8 घंटे तक विश्व विद्यालयों के प्रोफेसर एवं वैज्ञानिकों को पढ़ा रहे हैं। इसके लिए अलग से 25 शास्त्र-''ज्ञानधारा-जैन तथ्य जो आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से परे'' की रचना की है। अधिकांश प्रोफेसर, वैज्ञानिकों ने प्रारम्भिक ज्ञान से लेकर उच्च ज्ञान तक आचार्य श्री से प्राप्त किया है। अभी भी कई प्रोफेसर, वैज्ञानिक आचार्य श्री की प्रेरणा से **P. H. D.** कर रहे है कई श्वेताम्बर संत आपके दर्शन के लिये आते है और पढते है। विदेश के शोधार्थी जो भारत में आते है, एवं भारत के कुछ शोधार्थीयों को आचार्य श्री के शिष्य पढ़ाते है। श्री नरेन्द्र कुमार जी अमेरिका वालों को अपनी कई शंकाओं का समाधान कई जगह जाने पर नहीं मिला उन सभी शंकाओं का सकारात्मक समाधान आचार्यश्री के पास मिला। इससे प्रभावित होकर अमेरिका में मन्दिर का निर्माण करा रहे है।

आचार्यश्री के इतने साहित्य 6 भाषाओं में अनेक संस्करण में छप चुके है, एवं देश विदेश में धर्म प्रचार हो रहा है आप सोचते होंगे कि इतना धन कहाँ से आता है?

आचार्यश्री चन्दा चिट्ठा करते हैं, किसी से मांगते हैं? नहीं। आचार्यश्री ने सम्मेदखिखर में 29 वर्ष पूर्व सन् 1997 में प्रतिज्ञायें ली थी उसमें से एक प्रतिज्ञा है चन्दा चिट्ठा नहीं करना, प्रलोभन, दबाव याचना आदि नहीं करना। उसके आगे अभी कई प्रतिज्ञायें ली है।

आचार्यश्री अकिंचन्य बन गये है। वे अपना नाम वर्चस्व कुछ भी नहीं चाहते है। स्वयं उनके भक्त शिष्य स्वेच्छा से तन, मन, धन से कर रहें है और आगे भी कई भक्त शिष्यों ने आजीवन करने का नियम लिया है।

आचार्य श्री एक दिगम्बर साधु होते हुए भी सभी धर्मों का अनादर नहीं करते है, किसी पंथ, मत, रूढ़ी परम्परा, संकीर्णता में विश्वास नहीं करते हैं। आपका कहना है कि सत्य, समता और शांति ही मेरा धर्म है, आपकी इस प्रकार की विचार धारा एवं प्रतिभा से प्रभावित होकर कई संस्थायें यथा गायत्री परिवार, नारायण सेवा संस्थान, R.S.S. विश्व हिन्दू परिषद, जेना पीस नेक्सट विदेश आदि एवं अनेक वैज्ञानिक, प्रोफेसर, डाक्टर इन्जीनियर, वकील, जज, हिन्दू, श्वेताम्बर, अमेरीका के वैज्ञानिक आदि आप द्वारा रचित ग्रंथ के प्रकाशन में स्वेच्छा से तन, मन, धन से सहयोग कर रहे है, आपसे अध्ययन कर देश-विदेशों में जाकर धर्म प्रचार कर रहे है।

आचार्यश्री के द्वारा आशीर्वाद प्राप्त दो संस्थाऐं (1) धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान बड़ौत (2) धर्म दर्शन सेवा संस्थान उदयपुर (शाखा प्रतापगढ़, सलूम्बर, सागवाड़ा, मुंबई, गाजीयाबाद, मुजफ्फरनगर, कोटा, अमेरीका आदि) आपके मार्ग दर्शन में साहित्य प्रकाशन, व्यसन मुक्ति, जैन एकता एवं विश्व शांति, साधु वैयावृत्य आदि का कार्य कर रही है।

आचार्य श्री के परम श्वेताम्बर भक्त मातुश्री बीमला बेन चम्पकलाल खेतानी परिवार अहमदाबाद मुंबई वालों ने आचार्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त कर सम्पूर्ण भारत वर्ष के दिगम्बर संतो के लिए औषधी, उपकरण प्रदान करना एवं वैद्यराजों की एक टीम द्वारा चिकित्सा व्यवस्था आदि वैयावृत्य किया जा रहा है।

आचार्य श्री के श्वेताम्बर भक्त श्री शैलेन्द्र जी घीया मुंबई वाले विद्यालयों में छात्र छात्राओं को वस्त्र (स्वेटर) वितरण कर एवं आदिवासी क्षेत्रों में व्यसन मुक्ति का कार्य कर रहे हैं। उन्होंने आचार्य श्री को निवेदन किया कि D.N. A., R. N.A. (कर्म सिद्धान्त पर आपके वैज्ञानिक शिष्यों द्वारा रिचर्स कराई जाय जिसका सम्पूर्ण खर्च मैं वहन करूँगा।

आचार्य श्री द्वारा प्रायः 300 दीक्षित, शिक्षित साधु, ब्रह्मचारी आदि के अतिरिक्त 13 प्रदेशों के हजारों कक्षाओं, 34 धर्म दर्शन विज्ञान प्रशिक्षण शिविरों 13 अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठियों आदि के माध्यम से लाखों दिग., श्वेता., हिन्दू, मुस्लिम आदि के विद्यार्थियों से लेकर शिक्षक, प्राचार्य, प्राध्यापक शिक्षा विद, वैज्ञानिक, इंजीनीयर वकील, न्यायधिश कुलपति, शोध निदेशक आदि को प्रशिक्षण संबोधन, मार्गदर्शन दिया है, दे रहे है और आगे भी देंगे।

आचार्यश्री के शिष्यों में विशेष कर, प्रो डॉ. श्री सोहनराज जी तातेड़ श्वेताम्बर तेरह पंथी आचार्य महाप्रज्ञ के शिष्य, पूर्व कुलपति आचार्यश्री द्वारा रचित साहित्य के शोध निदेशक है, P. H.D. करा रहे हैं।

2. प्रो. डॉ. श्री नारायाण लाल जी कच्छारा (श्वेताम्बर शिष्या स्थानक बासी) ने अमेरीका में इन्टरनेशनल ऑन लाईन पाठ्य क्रम की शुरूआत कर दी है।

आचार्य श्री स्वयं एवं आपके शिष्य पीस नेक्स्ट संस्था के सदस्य है। आपके आशीर्वाद से अमेरीका में जिनालय का निर्माण व आपके द्वारा रचित ग्रंथों/साहित्यों का अंग्रेजी में अनुवाद का कार्य चल रहा है। आचार्यश्री के अन्य शिष्य-यथा-प्रो. डॉ. पारसमलजी जैन, अमेरीका भौतिक विज्ञानी, डॉ. राजमल जैन इसरो के वैज्ञानिक राँयल सोसायटी के सदस्य, प्रो. डॉ. प्रभात कुमार जी जैन गाजीयाबाद प्रो. सुशील जी बड़ौत, डॉ. बजाज, कृषि वैज्ञानिक प्रो. श्यामलाल जी गोदावत, डॉ. बी. एल सेठी डायरेक्टर पी.जी. कॉलेज जयपुर आदि। अमेरीका इंगलैंड, ऑस्ट्रेलिया (मेलबोर्न) विश्व धर्म संसद (सभा) (जहाँ स्वामी विवेकानन्द गये थे) आदि स्थानों पर जाकर आचार्य श्री द्वारा रचित ग्रंथ/साहित्य के आधार पर भगवान् महावीर के मूल सिद्धान्त सूत्रों को व भारतीय सभ्यता, संस्कृति ज्ञान-विज्ञान के मूल सिद्धान्त, कर्म सिद्धान्त, अनेकान्त वाद, स्याद्वाद, विश्व शांति आदि विषयों पर व्याख्यान (प्रवचन) देकर धर्म प्रचार कर रहे है। आचार्यश्री के साहित्य पर P. H.D., M. Fill, Delit हो रहा है। 14 प्रदेशों के 57 विश्व विद्यालयों में एवं अन्य 300 स्थानों पर आचार्यश्री कनकनंदी साहित्य कक्ष की स्थापना हो चुकी है, और आगे भी यह क्रम जारी रहेगा।

आचार्यश्री के साहित्य को U. G.C. (यूनिवर्सिटी ग्रान्ट कमीशन) विश्व विद्यालय अनुदान आयोग से मान्यता प्राप्त होने से P. H. D. करने वाले योग्य विद्यार्थियों को प्रथम दो वर्ष में 19000 रु. व आगे प्रतिवर्ष 35000 के प्रति माह वेतन मिलता है। आपके साहित्य पर एक मुस्लीम बालिका नूसरत बानु ने भी P. H. D की है, उसके परिवार में अन्य तो ठीक कन्दमूल, रात्री भोजन का भी त्याग है।

सबसे बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि आचार्यश्री इतने ज्ञानी-विज्ञानी ज्ञान के सुमेरु, अनुभव से प्रौढ होने पर भी अपने आपको छात्र, विद्यार्थी, शिक्षार्थी मानते हैं। आचार्यश्री का स्वभाव, प्रकृति, शान्त, मौन, एकान्त प्रिय होने के कारण वर्ष 2013 का वर्षा योग (चार्तुमास हल्दीघाटी (म्यूजीयम) में जहाँ पर समाज का एक भी घर परिवार नहीं, श्वेताम्बर समाज के तीनों सम्प्रदाय, 52 वाँ अखील भारतीय जैन एकता मंच के कार्यकर्ता एवं संस्थापक श्री. मांगीलाल जी मादरेचा द्वारा प्रभावना पूर्वक ऐतीहासिक सम्पन्न कराया गया एवं आगे भी चातुर्मास के लिए श्री मादरेचा बार-बार निवेदन कर रहे है। श्वेताम्बर भक्त एवं हीरालालजी भूताला वाले व्यक्तिगत रूप से अकेले चातुर्मास कराने के लिए कई बार निवेदन कर चुके है।

गत वर्ष 2015 का वर्षायोग (चातुर्मास) ग्राम नन्दौड़ तह..सागवाड़ा जि. डूंगरपुर (राज.) में एक घर एक परिवार द्वारा श्रीमती नन्दाबाई श्री प्रवीण कुमार जी द्वारा बिना किसी बाह्य आडम्बर, पत्र-पत्रिका बोली, गाजा बाजा. माईक मंच माला, सम्मान आदि से परे बिना किसी खर्चे के सम्पन्न हुआ। यह परिवार आगे भी 5 चातुर्मास कराने के लिए आचार्य श्री को बार बार निवेदन कर रहा है।

इसके अलावा सागवाड़ा ग्राम वासी 5-10 चातुर्मास, सीपुर अतिशय क्षेत्र पर 21 चार्तुमास के लिए वहाँ के व्यस्थापक श्री नीतिन भैया 200-250 बार नारीयल चढा चुके है।

श्री नीर्मल कुमार जी सेठी अध्यक्ष श्री भारतवर्षीय दि-जैन महासभा आचार्य श्री के परम भक्त है, वे सन् 2008 से लगातार महावीर विश्व विद्यालय

मुरादाबाद (उ.प्र.) में शोध कार्य हेतु आपका आशीर्वाद नेतृत्व एवं मार्ग दर्शन चाहते है। आपको वहाँ ले जाने के लिये अपने प्रतिनिधि मंडल के साथ कई बार निवेदन कर चुके है, प्रयासरत है।

ग. आ. क्षमा श्री मात्रा जी अतीशय क्षेत्र कचनेर के पास धर्म तीर्थ पर स्थाई रूप से वहाँ पर साधना हेतु ले जाने के लिए लम्बे समय से प्रयासरत है एवं इस हेतु माताजी ने दो चातुर्मास सन् 2010 सीपूर सन् 2011 का सेमारी में किया।

गत कई वर्षो से महाराष्ट्र के औरंगाबाद, नागपूर, देवलॅगाव राजा, नासीक, आडूल, अम्बड़, जैन गिरी जटबाड़ आदि स्थानों के शिष्य भक्त अपने क्षेत्र में चातुर्मास कराने के लिये निवेदन कर रहे है। प्रयासरत है।

आचार्यश्री कनकनदी जी गुरुदेव का चातुर्मास सन् 2014 का उदयपुर में था और आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी का चातुर्मास दिल्ली में था। चातुर्मास के पश्चात् आ. गुप्ति नंदी जी ससंघ अपने गुरु के दर्शन हेतु दिल्ली से विहार कर जयपुर होते हुए 700 कि.मी. यात्रा का सफर करते हुए पहला मिलन देवपूरा में हुआ। उसके बाद शेषपुर, जैताना, आसपुर, ग.पू.काँ सागवाड़ा नन्दौड़ आदि स्थानों पर लगभग 1 महिना दोनों संघों का साथ प्रवास रहा इस अवधि में आ. श्रीगुप्तिनंदीजी, आर्यिका आस्था श्री माता जी व अन्य साधुओं ने भी आ. कनकनंदी जी गुरुदेव को महाराष्ट्र में (आपके क्षेत्र में) पधारने का सविनय पूर्वक काफी अनुरोध किया। आचार्यश्री ने आपकी भक्ति भावना को देखते हुए आशीर्वाद दिया कि वातावरण व व्यवस्था सही होगी तो मैं करूँगा। आचार्यश्री कनकनंदी जी गुरुदेव का व्यक्तित्व, कृतित्व व जीवन का ध्येय, लक्ष्य इतना महान् है कि उन जैसे विचारक के लिये राष्ट्रसंत जैसे शब्द से गौरवान्वित करना उनके योगदान व व्यक्तित्व का अवमूल्यन करना है। सत्वेषु मत्री की भावना रखने वाले ऐसे सन्त तो विश्व सन्त होते हैं, आचार्यश्री को विश्व सन्त की उपाधि से अलंकृत किया जाय तो भी कम है। आचार्यश्री को पहले भी कई उपाधियों से अलंकृत किया गया किन्तु आप किसी उपाधि का प्रयोग नहीं करते है,

किन्तु मेरी ऐसी भावना है। आचार्यश्री के संघ में जिसको भी प्रवेश मिला वे धन्य है, मैं अपने आपको बहुत भाग्यशाली मानता हूँ जो मुझे ऐसे महान् गुरु मिले। जय महावीर

निवेदन–मैं आचार्यश्री द्वारा रचित कुछ ग्रंथ व फोल्डर लेकर आया हूँ। आप द्वारा साहित्य प्रकाशन में सहयोग देने वालों को आशीर्वाद स्वरूप प्रदान किया जाएगा।

शुभाशीर्वाद व शुभकामनायें

पावन पञ्चकल्याणक में उपस्थित आचार्य 'देवनन्दी व आचार्य गुप्तिनन्दी को मेरा प्रतिनमोस्तु, साधुवृन्द को प्रतिनमोऽस्तु, आर्यिका क्षुल्लक क्षुल्लिका व ब्रह्मचारी ब्रह्मचारिणी आदि को यथायोग्य समाधिरस्तु शुभाशीर्वाद! उपस्थित भक्त गणों को मंगलमय शुभाशीर्वाद!

पञ्चकल्याणक महोत्सव आगम-अनुसार समता-शान्तिपूर्ण प्रभावना पूर्वक सम्पन्न हो ऐसी मेरी शुभकामनाएँ हैं।

पञ्चकल्याणक के माध्यम से स्व-पर-विश्व कल्याण हो, ऐसी मेरी मंगल कामनाएँ हैं।

हमारे संघस्थ ब्र. सोहनलाल जी के माध्यम से शुभ सन्देश भेजा हूँ वे मौखिक रूप से व विस्तार से पञ्चकल्याणक में बोलेंगे, अतः मैं संक्षिप्त रूप से यह शुभाशीर्वाद पत्र भेजा हूँ! –**आचार्य कनकनन्दी**

ग.पु. कॉलोनी, सागवाड़ा 23-1-2016

साहित्य प्रकाशन में विशेष सहयोगी ब्र. सोहनलाल के पुण्यस्मरण में

महान् पावन ज्ञानदान

–आचार्य कनकनन्दी

> सम्मं णाणं वेरग्ग तवो भावं णिरीह वित्तिचारित्तं।
> गुण सील सहावं उपज्जइ रयणसार मिणं।। (165) र. सा
> गंथमिणं जो ण दिट्ठइ ण हु मण्णइ ण सुणेइ णहु पठइ।
> ण हु चिंतइ णहु भावइ सो चेव हवेइ कुदिट्ठी।। (166) र.सा.

(चालः 1. छिप गया कोई रे... 2. बहुत प्यार करते है.... 3. पाउले चालती... 4. चाँद सी महबूबा...)

ज्ञानदान पावन है, सर्वज्ञ देव भी करते (हैं)...
गणधर-सूरी-पाठक-श्रावक भी करते (हैं)...
अठारह दोष रिक्त सर्वज्ञ, परम हितोपदेशी होते....
सात सौ अठारह भाषाओं में प्रवचन करते...(1)...

चार ज्ञानधारी गणधर का होता प्रवचन सम...
सर्वज्ञ उपदेशों का करते...ग्रन्थों में सम्पादन...
परम्परा आचार्य भी करते...ग्रन्थों का प्रणयन (लेखन)....
श्रावक भी करते ज्ञानदान...करके ग्रन्थ प्रकाशन...(2)...

सर्वज्ञ देव होते अनन्त ज्ञानी.. जो मनातीत ज्ञान...
गणधर में होते चौसठ ऋद्धि...व मनःपर्ययज्ञान...
परम्परा लेखक (कवि) आचार्यों में...होते बहुविधज्ञान...
भाषा व्याकरण-स्वमत-परमत...तात्कालीन ज्ञान-विज्ञान...(3)...

समीक्षा-समन्वय सह...करते हैं (वे) ग्रन्थ लेखन...
स्व-पर-विश्व हित हेतु...अनेकान्तमय वर्णन...

प्रथमानुयोग-करणानुयोग-चरणानुयोग-द्रव्यानुयोग...
प्रमाण-नय-निक्षेप युक्त...वे करते ग्रन्थलेखन...(4)...

प्रथमानुयोग है प्राथमिक...ज्ञानार्थी हेतु वर्णन...
शलाका महापुरुषों के चारित्र...द्वारा पुराण वर्णन...
पुण्य-पाप के द्वारा होता...उत्थान-पतन का वर्णन...
प्रकृति-पर्यावरण..सभ्यता-संस्कृति का वर्णन...(5)...

राजा-महाराजा-सेठों का...भोग-उपभोग का वर्णन...
पुण्यानुबन्धी-पापानुबन्धी...पुण्य व पापों का वर्णन...
पुण्यानुबन्धी-पुण्यशाली...त्याग से पाते स्वर्ग-मोक्ष...
पापानुबन्धी-पुण्यशाली...भोग से पाते संसार में दुःख...(6)...

करणानुयोग में अलौकिक...गणित में है वर्णन...
संसार से मोक्ष व षट् द्रव्य...सप्त तत्त्व-नवपदार्थ वर्णन...
चौदह मार्गणा व चौदह...गुणस्थानों का वर्णन...
परिणाम (भाव) व गणितमय...होता करणानुयोग महान्...(7)...

चरणानुयोग है नैतिक व...सदाचार का वर्णन...
आत्म विकास संयुक्त...आत्मज्ञान से आत्मानुचरण...
सद्गृहस्थ व श्रमणों का...है आध्यात्मिक सम्विधान...
पाप से परे पुण्य द्वारा..शुद्ध-बुद्ध होने का विधान...(8)...

द्रव्यानुयोग में होता है...शुद्ध-बुद्ध-आनन्द वर्णन...
अनन्तज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य आदि अनन्त गुणगण...
पतित से पावन व जीव से..जिनेन्द्र बनने का ज्ञान...
चारों अनुयोगों का प्रतिपाद्य...बनना है भगवान्...(9)...

उक्त ज्ञान-विज्ञानों का...अध्ययन-अध्यापन-लेखन...
जो करते हैं नवकोटि से...वे होते महान्-धन्य...
स्व-पर-विश्व कल्याणकारी से...महादानी-पुण्यवान्...
जिससे वे बनते श्रुतकेवली-सर्वज्ञ-भगवान्...(10)...

ज्ञान हेतु ही आहार-औषधि...उपकरण-वसतिका दान....
अन्यथा सभी दान-तप...त्याग-ध्यान परिणाम शून्य...
''पढम णाणं तदो दया'' अतः सभी...धर्मज्ञान पूर्वक सेवनीय...
अतः ज्ञानदानी ही गुरु...आगमोक्त मानें ''कनक श्रमण''...(11)...

मिथ्या-माया-निदान रिक्त...करणीय है ज्ञानदान...
ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि...वर्चस्व शून्य ज्ञानदान...
संकीर्ण पन्थ-मत-स्वार्थ...भेदभाव से शून्य...
पञ्चविध विनय युक्त, पञ्चविध स्वाध्याय सम्पन्न...(12)...

योगेन्द्रगिरि, दि. 21/3/2025, रात्रि 10.46

धर्मे स्थैर्य स्यात्कस्यचिच्चञ्चलस्य प्रौढं वात्सल्यं बृंहणं सद्गुणानाम्।
दानेन श्लाघा शासनस्यातिगुर्वी दातृणामित्थं दर्शनाचारशुद्धिः।। (107)

दान देने से किसी चञ्चल-धर्ममार्ग से च्युत होते हुए-साधर्मिक की उसमें स्थिरता होती है, धार्मिकों में प्रौढ (अतिशय) वात्सल्य प्रगट होता है, धार्मिकों में सद्गुणों की वृद्धि होती है, तथा दान देने से जिनशासन की बड़ी प्रशंसा होती है। इस प्रकार दाताजन के दर्शनाचारकी शुद्धि होती हैं।

औदार्य वर्यं पुण्यदाक्षिण्यमन्यत् संशुद्धो बोधः पातकात्स्याज्जुगुप्सा
आख्यातं मुख्यं सिद्धधर्मस्य लिङ्गं लोकपेयस्तद्दातुरेवोपपन्नम्।। (108)

श्रेष्ठ उदारता, पवित्र मृदुता या सरलता, निर्मलज्ञान, पाप से ग्लानि, तथा लोकप्रियता ये अनादि सिद्ध धर्मके चिन्ह कहे गये हैं। और ये सब गुण दाता को ही प्राप्त होते हैं।

तीर्थोन्नतिः परिणतिश्च परोपकारे
ज्ञानादिनिर्मलगुणावलिकाभिवृद्धिः।
वित्तादिवस्तुविषये च विनाशबुद्धिः
संपादिता भवति दानवतात्मशुद्धिः।। (109) धर्मरत्ना.

दान देने से तीर्थ की उन्नति, दाता की परोपकार परिणति (प्रवृत्ति), ज्ञानादि

निर्मल गुणसमूह की वृद्धि, धन आदि वस्तुओं में नश्वरता का विचार और दाता की आत्मशुद्धि भी है।

सीदन्ति पश्यतां येषां शक्तानामपि साधवः।
न धर्मो लौकिको ऽप्येषां दूरे लोकोत्तरः स्थितः।। (110)

दुःख के दूर करने में समर्थ होकर जो श्रावक साधुजन को कष्ट में देखकर भी उनके दुःख को दूर नहीं करते हैं, उनके लौकिक धर्म भी सम्भव नहीं है, फिर भला लोकोत्तर धर्म तो उनसे बहुत दूर है, ऐसा समझना चाहिये।

सीदन्तो यतयो यदप्यनुचितं किंचिज्जलान्नादिकं
स्वीकुर्वन्ति विशिष्ट भक्तिविकलाः कालादिदोषादहो।
मालिन्यं रचयन्ति यज्जिनमतस्यास्थानशय्यादिना
श्राद्धानामिदमेति दूषणपदं शक्तावुपेक्षाकृताम्।। (111)

रोगादि से पीडित साधुजन विशिष्ट भक्ति से रहित होते हुए काल आदिके दोष से यदि अपने पद के अयोग्य जल व अन्नादि का स्वीकार करते हैं तथा अयोग्य वसति व शय्या आदिका ग्रहण करके जिनमत में मलिनता को उत्पन्न करते हैं तो यह दोष शक्ति होने पर भी उपेक्षा करने वाले श्रावकों पर आता है-इसे श्रावकों का दोष समझना चाहिये।

अपात्र बुद्धिं ये साधौ लिङ्गिमात्रेऽपि कुर्वते।
नू नं न पात्रतास्त्येषां यथात्मनि तथा परे।। (112)

जो किसी विशेष साधु के अथवा लिंगी-साधु-मात्र के विषय में अपात्र बुद्धि को करते हैं-उसे पात्र नहीं समझते हैं-उनकी निश्चय से जैसे स्वयं अपने में पात्रता नहीं है वैसे ही वे दूसरे साधु के विषय में भी अपात्रता की कल्पना करते हैं।

सुदृगादिपरं पात्रं सर्वमुक्तं जिनागमे।
दानं तु निर्गुणेभ्यो ऽपि दातव्यमनुकम्पया।। (113)

जो सम्यग्दर्शन आदि से सम्पन्न हैं वे सब पात्र हैं ऐसा जिनागम में कहा गया है। इसके अतिरिक्त दान तो निर्गुणों को भी- सम्यग्दर्शन आदि गुणों से रहित जनों को भी-दया भाव से देना चाहिये।

आहारवस्त्रामत्रादिदाने पात्रपरीक्षणम्।

कुर्वन्तः किं न लज्जन्ते दरिद्राः क्षुद्रचेतसः।। (114)

आहार वस्त्र व पात्र आदि देने के लिये पात्र की परीक्षा करनेवाले दरिद्र श्रावक अपनी इस क्षुद्र मनोवृत्ति पर लज्जित क्यों नहीं होते हैं?

सर्वज्ञो हृदि वाचि तस्य वचनं काये प्रणामादिकं।

प्रारम्भोऽपि च चैत्यकृत्यविषयः पापाज्जुगुप्सा परा।

हीनानामपि सन्त्यमी शुभदृशां येषां गुणा लिङ्गिनां

ते मन्ये जगतोऽपि पात्रमसमं शेषं किमन्विष्यते।। (115)

चरित्र से हीन होने पर भी जिन उत्तम दृष्टिवाले-सम्यग्दृष्टि-लिंगियों के हृदय में सर्वज्ञ, वचन में उसकी वाणी, शरीर में उनके लिये प्रणामादिक, जिनमन्दिर व जिन प्रतिमा संबंधी कार्य विषयक प्रकृष्ट आरम्भ और मन में पाप से अतिशय ग्लानि ये गुण होते हैं उनको मैं लोक में अनुपम पात्र मानता हूँ। फिर भला शेष को परिपूर्ण संयमी आदि को क्यों खोजा जाता है?

चतुर्दशाद् गुणस्थानात्सर्वे सर्वे ऽप्यपेक्षया।

निर्गुणाः सगुणास्तु स्युस्तृतीयादुत्तरे क्रमात्।। (116)

चौदहवें गुणस्थान से पूर्व गुणस्थानवर्ती सब ही अपेक्षाकृत निर्गुण हैं-हीन गुणवाले अथवा गुणों से रहित हैं। तथा तीसरे गुणस्थान से आगे के गुणस्थानवर्ती सब ही जीव क्रम से अपेक्षा कृत सगुण-सम्यग्दर्शनादि गुणों से सहित अथवा परिपूर्ण गुणवाले हैं।

साधवो दुष्षमाकाले कुशीलवकुशादयः।

प्रायः शबलचारित्राः सातिचाराः प्रमादिनः।। (117)

इस पंचमकाल में कुशील व वकुशादिक साधु प्रायः शबल चारित्र-दूषित चरित्रवाले-अतिचारों से सहित और प्रमादयुक्त होते है।

सगुणो निर्गुणोऽपि स्यान्निर्गुणो गुणवानपि।

शक्यते न च निश्चेतुं मान्यः सर्वोऽप्यतो मुनिः।। (118)

जिसे सगुण समझा है वह कदाचित् निर्गुण हो सकता है। और जिसे निर्गुण समझा है वह सगुण हो सकता है। इस प्रकार जब सगुण और निर्गुण का निश्चय करना शक्य नहीं है तब ऐसी अवस्था में जिनलिंगधारी सब ही मुनिजन का सत्कार करना चाहिये।

गुणानुरागितैवं स्याद्दर्शनाभ्युन्नतिः परा।
लोकेऽत्र पात्रता पुंसां परत्र कुशलं परम्।। (119)

इस प्रकार से गुणी और निर्गुण का विचार न करके जिनलिंगधारक साधुमात्र को आहारादि के देने से-दाताजनों की गुणानुरागिता, सम्यग्दर्शन की उत्कृष्ट उन्नति, इस लोक में पात्रता और परलोक में उत्कृष्ट हित होता है।

अक्रूरता गुणापेक्षा दोषोपेक्षा दयालुता।
उदारतोपकारेच्छा विधेया सुधिया सदा।। (120)

निर्मलबुद्धि मनुष्य को दुष्टता का परित्याग, गुणों की अपेक्षा, दोषों की उपेक्षा, दयालुता, उदारता-दातृत्व बुद्धि और परोपकार की इच्छा सदा ही करनी चाहिये।

एकं पापं देवभावेऽप्यदानं साधोरन्यन्निन्दया निर्निमित्तम्।
गृह्णन्त्युच्चैः क्रूरचित्ता वराकाः पापैः पापा नैव तृप्यन्ति लोकाः।। (121)

जिनका मन क्रूर है ऐसे पापी लोग देने योग्य आहारादिक के होने पर भी जो नहीं देते हैं, यह एक पाप हुआ, तथा साधुओं की जो वे निष्कारण निन्दा करते हैं, यह दूसरा पाप हुआ, इस प्रकार से वे दोनों ही घोर पापों को ग्रहण करते हैं। ठीक है-बेचारे पापी लोग पापों से कभी तृप्त नहीं होते हैं।

ख्यातं मुख्यं जैनधर्मप्रधानं श्राद्धस्योक्तं द्वादशं तद्व्रताष्म्।
दत्तं पूज्यैः कीर्तितं चागमज्ञैर्युक्त्या युक्तं दीयतां निर्विवादम्।। (122)

जो प्रसिद्ध दान मुख्य व जैन धर्म में प्रधान है उसे यद्यपि संख्या में बारहवाँ व्रत कहा गया है, तो भी उसे श्रावक के व्रतों में प्रथम व्रत समझना चाहिये। उक्त दान को पूज्य पुरुषों ने दिया है और आगम के ज्ञाता जनों ने उसकी स्तुति की है। इसलिये युक्ति से युक्त उस दान को बिना किसी विवाद के देना योग्य है।

उत्सर्गेणापवादेन निश्चयाद् व्यवहारतः।

क्षेत्रपात्राद्यपेक्षं च सूत्रं योज्यं जिनागमे।। (126)

जिनागम में उत्सर्ग और अपवाद, निश्चय और व्यवहार, क्षेत्र व पात्र आदि की अपेक्षा से सूत्र की योजना करनी चाहिये।

न किंचित्कृत्यमेकान्तादक्कृत्यं वा जिनागमे।

गुणदोषौ तु संचिन्त्य कृत्याकृत्यव्यवस्थितिः।। (127)

जिनागम कोई भी कार्य एकान्त से न विधेय ही माना गया है और न अविधेय भी। किन्तु वहाँ इस कार्य की विधेयता और अविधेयता की व्यवस्था गुण व दोष के आधार पर की गयी है।

विधीयते गुणः शुद्ध ईषदोषो महागुणः।

न समधिकदोषस्तु गुणो दोषो न केवलः।। (128)

जिस आरम्भ कार्य में केवल गुण ही हो वह किया जाता है। जो आरम्भ कार्य महान् गुण से संयुक्त होकर कुछ थोडे से दोष से भी संगत हो वह भी विधेय है। किन्तु जो गुण दोष की अधिकता से व्याप्त हो वह विधेय नहीं है। तथा जिस आरम्भ कार्य में केवल दोष ही हो वह भी विधेय नहीं है।

आलोच्यागममागमज्ञ पुरुषानापृच्छ्य धर्माश्रुनो

दृष्ट्वा शिष्टजनप्रवृत्तिमधुना श्रुत्वागमे प्राक्तनीम्।

मोहापोहविधित्सया शुभधियां किंचिन्मया वर्णितं

कर्णे कार्यमिदं विचार्य निपुणैः पुण्यार्थिभिः सज्जनैः।। (129)

मैंने आगम का विचार कर के आगम के जाननेवाले धर्मेच्छु विद्वानोंसे पूछकर वर्तमान में सत्पुरुषों के आचरण को देखकर, तथा उनकी पूर्व प्रवृत्ति को सुनकर निर्मल बुद्धि के धारक सज्जनों के मोह के हटाने की इच्छा से जो यह कुछ थोड़ासा वर्णन किया है उसका विचार कर के पुण्येच्छु निपुण सज्जनों को उसे कान पर करना चाहिये-उसे सुनकर हृदयस्थ करना चाहिये।

दानाभावे भवति गृहिणां मुख्यधर्म प्रहाणं
साधूनां च स्थितिविरहतो मार्गनाशः क्रमेण।
लोके निन्दा जिनपतिमतस्थावदातस्य गुर्वी
दानं युक्त्या जयमुनिरुपासाधयत्साधु सिद्ध यै।। (130)

दान के अभाव में गृहस्थों के मुख्य धर्म का नाश होता है, उस दान के बिना साधुओं की स्थिति नहीं रह सकती है, तथा साधुओं का अवस्थान न रहने से समीचीन मार्ग का विनाश भी अनिवार्य है। इस प्रकार से लोक में निर्मल जैनमत की घोर निन्दा हो सकती है। इस सबका विचार करके जय (जयसेन) मुनि ने साधुओं के अस्तित्व की सिद्धि के लिये युक्तिपूर्वक दान का यह वर्णन किया है।

ज्ञानदानफलम्

ज्ञानस्यास्माद्दानमत्रा निदानं दातुर्लातुर्धर्मसिद्धेर्निदानम्।
ईदृङ्नान्यत्स्यात्सुखानां निधानं भव्यास्तेनं प्रोच्यते तत्धानम्।। (1)

हे भव्य जीवों! आगामी भोगाकांक्षा से रहित जो ज्ञान का दान किया जाता है वह यहाँ दाता और ग्रहीता दोनों के लिये धर्मसिद्धि का कारण होता है। इस ज्ञानदान के सदृश और दूसरा कोई सुखका भंडार (कारण) नहीं है। इसीलिये उस प्रधानभूत ज्ञानदान का वर्णन किया जाता है।

अभयान्नादिभ्यां तु प्रवर्तननिवर्तने न मर्त्यानाम्।
अर्थेऽनर्थे च यथा ज्ञानात्तेनोत्तमं ज्ञानम्।। (2)

जिस प्रकार मनुष्यों की उपादेय पदार्थ के विषय में प्रवृत्ति और अनर्थ के विषय में निवृत्ति ज्ञान के द्वारा हुआ करती है, उस प्रकार उनकी वह प्रवृत्ति और निवृत्ति अभय व अन्न आदि के द्वारा सम्भव नहीं है। इसी कारण ज्ञान को उत्तम माना गया है।

सर्व पुरुषार्थसिद्धे र्निबन्धनं धीधना वदन्तीदम्।
तेन ज्ञानं ददता दत्ताः सर्वे ऽपि पुरुषार्थाः।। (3)

ज्ञान धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति का कारण है ऐसा बुद्धिरूपी धन के धारक आचार्य कहते हैं। इसलिये जो उस ज्ञान को देता है, समझना चाहिये कि उसने सब ही पुरुषार्थों को दे दिया है।

अन्यच्च धर्ममूलं करुणा सा ज्ञानकारणात्सिद्धा।
सिद्धान्ते ऽपि प्रथितं प्रथमं ज्ञानं ततः करुणा।। (4)

दुसरे, धर्म का मूल कारण जो दया है, वह भी ज्ञान के निमित्त से सिद्ध होती है। आगम में भी पहिले ज्ञान और तत्पश्चात् दया प्रसिद्ध है।

धर्मेण चाखिलसुखानि समीहितानि
मर्त्यामरेषु मनुजो लभते हितानि।
धर्मः समस्तसुखसिद्धिनिमित्तमुक्तः
सर्वेण वादिनिवहेन विना विवादम्।। (5)

प्राणी धर्म के आश्रय से मनुष्य जन्म में और देव जन्म में उत्पन्न होकर संपूर्ण इच्छित सुखों और हितों को प्राप्त करता है। सर्व वादिसमूहने निर्विवाद रूप से उस धर्म को समस्त सुखों की सिद्धि का निमित्त कहा है।

तद्धर्मसाधनमिदं ददताखिलानि
सौख्यानि धर्मजनितानि समर्पतानि।
वित्तं यथा वितरता वनितारतादि
वस्तूनि चित्तसुलभानि विलोभनानि।। (6)

जो उस धर्म के साधनभूत इस ज्ञानको दिया करता है उस ने धर्मसे उत्पन्न होनेवाले सभी सुखों को इस प्रकार से दे दिया समझना चाहिये, जिस प्रकार कि धनको देनेवाला व्यक्ति मन को सुलभ रूपसे लुभानेवाली स्त्री सम्भोगादि मनोज्ञ वस्तुओं को दे देता है।

लोकेऽपि रूपके दत्ते प्रदत्तं भोजनं जनः।
हेतौ कार्योपचारेण निर्विचारं वदत्यदः।। (7)

लोक में भी यदि किसीने रुपया दिया तो मनुष्य निर्विवाद रूपसे कहता है कि

इसने मुझे भोजन दिया। इस लोक व्यवहार में निमित्तभूत कारण (रुपया) में कार्य (भोजन) का उपचार है।

लोकद्वयेऽभिलषता विपु लोपकारं
दातव्यमेतदनिशं करुणापरेण।
ज्ञानात्परं न परमस्ति परोपकार
संपादकं सपदि संपदमादधानम्।। (8)

इस लोक और परलोक दोनों ही लोकों में विपुल परोपकार करने की अभिलाषा करनेवाले दयालु मनुष्य को निरन्तर इस ज्ञानका दान करना चाहिये। कारण यह कि लोक में उस ज्ञान को छोडकर और दूसरा कोई परोपकार का साधन नहीं है। वह ज्ञान शीघ्र सम्पत्ति देनेवाला है।

ज्ञेयं ज्ञात्वा ज्ञानतो ज्ञानवन्तो हेयं हित्वा पूजनीया जनानाम्।
संजायन्तेऽत्रैव जन्मन्यकृच्छ्रं पापभ्रंशादन्यजन्मन्यवश्यम्।। (9)

प्राणी ज्ञान से ज्ञेय को प्रयोजनीभूत जीवादि तत्त्वों को जानकर ज्ञानवान् होते हुए हेय का मिथ्यात्वादि दुर्भावों का परित्याग कर देने से समस्त जनों के पूज्य हो जाते हैं। यह ज्ञानदानकृत इस लोकसंबंधी उपकार हुआ। तथा पर भव में पाप का विनाश करने से वे अवश्य ही सुख को प्राप्त करते हैं।

कल्याणकलापं कारणं ज्ञानं सर्वविपत्तिवारणम्।
मिथ्यात्वादिविरोधि साधनं सिद्धेः सिद्धं साधु साधनम्।। (10)

वह ज्ञान कल्याण समूह का कारण, समस्त आपत्तियों का निवारक, मिथ्यात्व व अविरति आदिका विरोधी कारण उनका विनाशक-और मुक्ति का प्रमाणसिद्ध निर्दोष उपाय है।

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुते क्षणात्।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा।। (11)

जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि इन्धन को, लकडियों को-क्षणभर में जलाकर

भस्म करती है उसी प्रकार ज्ञानरूप अग्नि सर्व ज्ञानावरणादि कर्मों को क्षणभर में जलाकर भस्म कर देती है।

अज्ञानी यत्कर्म क्षपयति बहुकोटिभिः प्राणी।
तज्ज्ञानी गुप्तात्मा क्षपयत्युच्छ्वासमात्रेण।। (12)

अज्ञानी प्राणी जिस कर्म का अनेक कोटि वर्षों में क्षय करता है, उसका क्षय ज्ञानी जीव पाप से आत्मा का संरक्षण करता हुआ उच्छ्वास मात्र काल में क्षय कर देता है।

वाचकमुख्योऽप्याख्यत्संज्ञानादीनि मुक्तिमार्ग इति।
न च मार्गणीयमपरं परमस्ति महात्मनां मुक्तेः।। (13)

वाचक मुख्य-आचार्य उमास्वामी ने भी सम्यग्ज्ञानादि-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र-मोक्ष के मार्ग हैं, ऐसा कहा है। और महापुरुषों को उस मोक्ष को छोडकर अन्य किसी को खोजना नहीं हैं, किन्तु एक मात्र उसी मोक्ष को खोजना है, तथा उसका उत्कृष्ट साधन यह सम्यग्ज्ञान ही है।

यो दिशति मुक्तिमार्ग परोपकारी ततोऽपरो न परः।
परमपदानन्दादिव भवभुवनसमुद्भवानन्दः।। (14)

जो परोपकारी महापुरुष मोक्षमार्ग का कथन करता है उससे दुसरा कोई जगत् में उत्कृष्ट परोपकारी नहीं है। जैसे परमपद (मोक्ष) का आनन्द ही सर्वोत्कृष्ट है, उस से संसार रूप घर में उत्पन्न हुआ आनंद कदापि उत्कृष्ट नहीं हो सकता है।

समीहमानैः स्वपरोपकारं ज्ञानं सदा देयमचिन्तयद्भिः।
परिश्रमं श्रीश्रमणैः स्वकीयं कृत्यान्तरं वा सुतरामतन्द्रैः।। (15)

स्वयं अपने और साधर्मिक जनके उपकार करने की इच्छा रखनेवाले ज्ञानी मुनिराजों को परिश्रमका विचार न करके सदा ज्ञान का दान करना चाहिये। अथवा उन्हें अपने इतर कृत्य की चिन्ता न करते हुए आलस्य को छोड़कर स्वयं ही उस ज्ञानका दान करना चाहिये।

नास्मिंश्चित्तं चरति सुचिरं चिन्तनीयान्तरेषु
प्रायः कायो रचयति न वा दुष्टचेष्टामनिष्टाम्
व्यग्रं वक्त्रं वदति न परं येन सावद्यजातं
धर्मादानं तदिदमुदितं ज्ञानदानं प्रधानम्।। (16)

इस ज्ञान के प्राप्त होने पर मन विचारयोग्य किन्हीं इतर कार्यों में दीर्घकालतक संचार नहीं करता है। शरीर प्रायः अनिष्ट दुष्ट चेष्टा को नहीं करता है-वह हिंसादि हीन कृत्यों में प्रवृत्त नहीं होता है। तथा मुख से व्याकुल हो कर पापसंयुक्त कार्यों का कथन नहीं करता है। इसीलिये धर्म ग्रहण का कारण होने से इस ज्ञानदान को प्रधान कहा गया है।

ज्ञानमेकमनेकेषामेककालमुपक्रियाम्।
करोति याति नो हानिं दत्तं वर्धेत कौतुकम्।। (17)

ज्ञान ही एक समान काल में अनेकों का बहुत से श्रोता जनों का उपकार किया करता है। तथा वह दिये जाने पर हानि को न प्राप्त होकर वृद्धि को ही प्राप्त होता है, यही आश्चर्य की बात है। ज्ञान में धन की अपेक्षा यह विशेषता समझना चाहिये।

अपास्यति कुवासनां भवशतार्जितामूर्जितां
प्रमार्जयति दुर्जयं निबिडपापरूपं रजः।
प्रकाशयति च स्फुटं किमपि वस्तुतत्त्वं परं
करोति सकलं शुभं परिणता चिदेषा नृणाम्।। (18)

यह ज्ञान सैंकडो भवों से चली आयी प्रबल कुवासना को दूर करता है, जो कष्ट से जीती जा सके ऐसी सघन पापरूप धूलि को झाड देता है तथा किसी अपूर्व ही वस्तुस्वरूप को स्पष्टता से प्रकट करता है। इस प्रकार वह परिपक्व ज्ञान मनुष्यों के पूर्ण शुभ को करता है।

मुष्णाति विषयतृष्णां पुष्णाति च निर्वृतिं हरत्य रतिम्।
अमृतमिव ज्ञानमिदं कोपाद्युपतापमपनुदति।। (19)

अमृततुल्य वह ज्ञान विषयलोलुपता को नष्ट करता है, सुख को पुष्ट करता है, अरति को दूर करता है, तथा कोप, अभिमान आदि के संताप को नष्ट करता है।

विलसद तुलमोदं मानसं मानमुक्तं
विपुलपुलकपूर्णं तूर्णमङ्गं विधत्ते।
श्रुतिसुखमसमानं लोचने चाश्रुगर्भे
श्रुतमपि जिनवाक्यं श्रेयसामेकहेतुः।। (20)

जिनवाणी का सुनना भी श्रोता के मन को मान से रहित करके उसे विलासयुक्त अनुपम आनन्द से परिपूर्ण, शरीर को शीघ्र ही विस्तृत रोमांच से व्याप्त, कानों को अनुपम सुख से संयुक्त और नेत्रों को आनन्दाश्रुओं से पूर्ण कर देता है। इस प्रकार केवल जिनवाणीका श्रवण भी विविध प्रकार के कल्याण का एकमेव कारण होता है।

दहति मदनवह्निर्मानसं तावदेव
भ्रमयति तनु भाजां कुग्रहस्तावदेव।
छलयति गुरुतृष्णाराक्षसी तावदेव
स्फुरति हृदि जिनोक्तो वाक्यमन्त्रो न यावत्।। (21)

जब तक श्री जिनेश्वर का वचनरूप मंत्र अन्तःकरण में स्थान नहीं प्राप्त करता है तब तक ही कामाग्नि मन में दाह उत्पन्न कर सकती है, तब तक ही दुष्ट शनि आदि ग्रह अथवा पिशाच प्राणियों को भ्रान्ति उत्पन्न करा सकते हैं और तब तक ही तीव्र विषयतृष्णारूप राक्षसी धोखा दे सकती है।

त्रुट्यन्ति स्नेहपाशा झटिति विघटते दुर्निवारा दुराशा
प्रौढो गाढाधिरूढो रहयति दृढतां कर्मबन्धमबन्धः।
ध्वंसन्तो ध्वान्तपूरा इव दिवसपतेः पातकार्थाभियोगा
योग्यानां ज्ञानयोगादुपरमति मतिर्गेहदेहादितो ऽपि।। (22)

ज्ञान के संबंध से योग्य जनोंकी स्नेहरूप फांसें-गृहकुटुम्बादिसे आसक्तियाँ-शीघ्र नष्ट हो जाती हैं। दुःखपूर्वक नष्ट होनेवाली दुराशा विषयतृष्णा शान्त हो जाती है। आत्मा के साथ एक क्षेत्रावगाह रूप से दृढतापूर्वक संबद्ध हुए प्रबल कर्मबंध का विस्तार उस दृढता को छोड़ देता है-पाप प्रकृतियों की स्थिति और अनुभाग क्षीण हो जाता है। उससे पापजनक पदार्थों के संबन्ध इस प्रकार नष्ट हो जाते हैं। जिस प्रकार

कि सूर्य के संबन्धसे अन्धकार के प्रवाह नष्ट हो जाते हैं। तथा उनकी बुद्धि घर व शरीर आदि से विश्राम ले लेती है-उनसे ममत्वबुद्धि छूट जाती है।

शास्त्राञ्जनेन जनितामलबुद्धिनेत्र-
स्तन्त्रोपकल्पितमिवाखिलजीवलोकम्।
लोलं विलोकयति फल्गुमफल्गु रूपं
नास्थामतो वितनुते तनु काञ्चनादौ।। (23)

जिसका बुद्धिरूप नेत्र शास्त्ररूप अंजन के संसर्ग के निर्मलता को प्राप्त हुआ है, वह भाग्यशाली मनुष्य समस्त जीवलोक को चराचर विश्व को-गारुड आदि विद्या से उपस्थित किये गये के समान चंचल देखता है। तथा श्रेष्ठ रूप को निरर्थक देखता है इसीलिये वह शरीर और सुवर्णादि में आस्था को नहीं करता है-वह उन्हें अस्थिर मानता है।

संज्ञानलोचनमिदं भविनोऽसमानं
भूतं भविष्यदखिलं खलु वर्तमानम्
सूक्ष्मं तिरोहित मतीन्द्रियदूरवर्ति
ज्ञेयं विलोकयति विष्टपंमध्यवर्ति।। (24)

ज्ञाननेत्र सर्व प्रकार से जगत् को जानता है। भव्य का यह सम्यग्ज्ञानरूप चक्षु अनुपम है। यह जगत् के मध्य में स्थित भूत, भविष्यत्, वर्तमानकालीन ज्ञेयों को-वस्तुओं को जानता है। तथा जो अतीन्द्रिय होने से दूरवर्ता कहे जाते हैं ऐसे सूक्ष्म-परमाणु आदिक तिरोहित-देशान्तरित-मेवादिक, कालान्तरित-राम रावणादिक, अतीन्द्रिय पापपुण्य, धर्माधर्मादिक द्रव्य, इन सबको जानता है।

विनापि चक्षुषा रूपं निश्चिन्वन्ति विपश्चितः।
चक्षुष्मन्तोऽपि नाज्ञाना हेयोपादेयवेदिनः।। (25)

विद्वान् लोग आँख के बिना भी वस्तु के रूप का निश्चय करते हैं-हेय को हेय और उपादेय को उपादेय जानते हैं। परन्तु अज्ञानी जन आँख के होने पर भी हेय और उपादेय वस्तु को नहीं जानते हैं।

शास्त्रनेत्रविहीनो हि वाहदोहादिवर्जितः।

पशोरपि नरः पापः कथं जीवन्न लज्जितः।। (26)

जो मनुष्य आगमरूप नेत्र से रहित है-जिसे हितकर आगम का परिज्ञान नहीं है उसे निश्चयतः पशु से भी पापी समझना चाहिये। कारण कि पशु-बैल व गाय आदि तिर्यंच प्राणी-तो बोझा ढोने व दूध दुहने आदि के उपयोग में आते हैं, परन्तु आगमज्ञान से हीन मनुष्य किसी उपयोग में नहीं आता है। ऐसा मनुष्य जीवित रहते हुए भला लज्जा को क्यों नहीं प्राप्त होता है?

नरेण शास्त्रशून्येन किं शोच्येन विपश्चिताम्।

तिरश्चोऽपि जघन्येन लब्धनाशितजन्मना।। (27)

शास्त्रज्ञान से शून्य मनुष्य विद्वानों के लिये शोचनीय होकर पशु से भी हीन माना जाता है। ऐसे मनुष्य से भला स्वयं उसका व अन्य का भी क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? कुछ भी नहीं। वह मनुष्य जन्म को पाकर भी उसे यों ही नष्ट कर देता है।

श्लाघ्याः सुलब्धजन्मानः स्पृहणीया विवेकिनाम्।

पूजनीया जनस्यान्ये धन्याः शास्त्रविशारदाः।। (28)

उन से भिन्न जो भाग्यशाली जन उस शास्त्रज्ञान से विभूषित होते हैं, वे प्रशंसा के पात्र हैं, उनका मनुष्यजन्म सफल है, उन को विवेकी जन चाहते हैं, तथा जन समुदाय उनकी पूजा करता है।

श्रूयन्ते श्रूतिनोऽश्रान्तं श्रेणिभिः श्रीमतां श्रिताः।

विश्राणयन्तः श्रेयांसि श्रूतीनां विश्रुतश्रुताः।। (29)

जिन का कि धनिकों के समूहों ने आश्रय लिया है ऐसे कितने ही प्रसिद्ध श्रुतशाली महाभाग कल्याणकारी आगमों का निरन्तर दान करते हुए सदा सदुपदेश देते हुए-सुने जाते हैं।

तपसा रिक्तानामपि शम्भूनां संभवन्ति यत्कमलाः।

तरलितभुवनस्वान्तास्तच्छूतचिन्तामणिस्फुरितम्।। (30)

तपश्चरण से रहित भी शंभुओं को, धनवानों को जो समस्त जनसमूह के मन को चंचल करनेवाली लक्ष्मी प्राप्त होती है उसे श्रुतज्ञान रूपी चिन्तामणि रत्न का प्रभाव समझना चाहिये।

अभव्यसेनप्रायाणां यत्सुखं पूज्यता च यत्।
तथापि श्रुतकल्पागसेवा सूते महद्भुतम्।। (31)

अभव्यसेन जैसे आत्मानुभव रहित मुनियों को जो सुख, पूज्यपना (और यश) प्राप्त हुआ है उसे श्रुतज्ञानरूपी कल्पवृक्ष की सेवा उत्पन्न करती है, यह महान् आश्चर्य है।

धनश्री प्रभृतीनां च जातिस्मृत्यादिकं च यत्।
ज्ञानकामदुघापूर्व सेवा संजनयत्यदः।। (32)

धनश्री आदिकों को जो जातिस्मरण आदि हुआ है उसे ज्ञानरूप कामधेनु की पूर्व काल में की गई अपूर्व सेवा ने ही उत्पन्न किया है।

कुर्वाणा गीर्वाणा निर्वाणार्थं श्रुतस्य बहुमानम्।
श्रूयन्ते श्रुतभाजां महामुनीनां च बहुमानम्।। (33)

देवगण मोक्षप्राप्ति के लिये श्रुत का बहुमान और उस श्रुत के धारक महामुनियों का बहुमान करते हुए सुने जाते हैं।

जायन्ते च यतीनां श्रुतानुभावेन लब्धयो विविधाः।
फलमैहिकमामु त्रिकममलामरनर शिवसुखानि।। (34)

श्रुत के प्रभाव से मुनिजनों को इस लोक संबंधी फलस्वरूप अनेक प्रकार की लंब्धियाँ-ऋद्धियाँ प्राप्त होती हैं और परलोक में निर्मल देव व मनुष्यों का तथा अन्त में मुक्ति का भी सुख प्राप्त होता है।

धर्मार्थकाममोक्षाणां कीर्तेश्चैकं प्रकीर्तितम्।
ज्ञानं जलमिवावन्ध्यं धान्यानां संनिबन्धनम्।। (35)

जैसे जल धान्य की उत्पत्ति का सफल-व्यर्थ न होनेवाला कारण है, वैसे ही ज्ञान धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष और कीर्ति की प्राप्ति का निर्बाध कारण कहा गया है।

इदं विदित्वा श्रुतसंग्रहे गुरुर्गुरुक्रमाम्भोजरतैरनारतम्।
समीहमानैरसमां समुन्नतिं समुद्यमः सद्विधिना विधीयताम्।। (36)

यह जान कर के जो सज्जन अपनी असाधारण आत्मोन्नति की इच्छा करते हैं उन्हें सद्गुरुओं के चरणकमलों में अनुरक्त होकर विधिपूर्वक उस श्रुत के ग्रहण में निरन्तर महान् प्रयत्न करना चाहिये।

गुरुजनमुखे भक्त्या न्यस्यन्मुहुर्मुहुरीक्षणे।
क्षणमपि कथां कुर्वन्नन्यां न चापरचिन्तनम्।
उपचितरतिः सूत्रस्यार्थे शिरोरचिताञ्जलिः
पुलकितवपुः पूज्ये जल्पंस्तथेति समाहितः।। (37)
उदानन्दाश्रुणी बिभ्रन्नेत्रपात्रे पवित्रितम्।
स्वं कृतार्थं च मन्वानः पिबेत्तद्वचनामृतम्।। (38)

जो गुरुजन के मुख पर भक्ति से बार बार अपने नेत्रों को रख कर एक क्षण भी अन्य कथा को व मन में अन्य चिन्तन को नहीं करता है, जो सूत्र के अर्थ में अतिशय प्रीति रखता है, जिसने अपने भालप्रदेश पर हाथ जोडकर रखे हैं अर्थात् जो विनयपूर्वक मस्तक झुका कर नमस्कार करता है, जिसका शरीर आनन्द से रोमांचित हो रहा है, तथा गुरुने जो कुछ भी कहा है उसे जो तथा-ठीक है, वैसा ही करूँगा यह कह कर स्वीकार करता हुआ समाधान को प्राप्त हुआ है; ऐसे सत्पुरुष को उत्पन्न हुए आनन्दाश्रुओं से परिपूर्ण नेत्ररूप पात्रों के साथ मन में पवित्रता को धारण कर के अपने को कृतार्थ मानते हुए गुरु के वचनामृत का पान करना चाहिये।

नीचासनो न चासन्नो नातिदूरे न पृष्ठतः।
न पार्श्वतः समश्रेण्यां पुरोऽपि न पराङ्मुखः।। (39)

श्रुत के ग्रहण को अभिलाषी शिष्य गुरु के आगे हीन आसन पर बैठे-उच्चासन पर न बेंठे, वह न तो गुरु की अतिशय समीप बैठे, न अतिशय दूर बैठे, न पीछे बैठे और न पार्श्व भाग में बराबरी से भी बैठे तथा आगे बैठा हुआ भी गुरु की ओर पीठ कर के न बैठे।

संमुखीनोऽग्रतःस्थायी स्थास्तुकायः स्थिरासनः।
नैकाङ्गपादिकां कुर्यान्नैव पादप्रसारितम्।। (40)

वह गुरु की ओर मुख कर के आगे बैठे। उसे अपने शरीर व आसन को स्थिर रखकर एकांगपादिका को नहीं करना चाहिये-एक पाँव की जंघा पर दूसरे पाँव को रखकर नहीं बैठना चाहिये तथा पाँव फैलाकर बैठना भी योग्य नहीं है।

अवष्टम्भं न पट्टादौ नापि पर्यङ्कबन्धनम्।
नाधिक्षेपं विवादं नो न सावज्ञो न चापरम्।। (41)

उसे उस समय न पाटा (चोकी) आदि का आश्रय लेना चाहिये, न पर्यंक बन्धन को करना चाहिये, न तिरस्कार करना चाहिये, न विवाद करना चाहिये, न अपमान करना चाहिये और न किसी अन्य भी ऐसे निन्द्य कृत्य को करना चाहिये।

व्याख्यानादन्यदन्येषां विनेयः संनिधौ जनः।
अपथ्यमिव दूरेण हितैषी तद्विवर्जयेत्।। (42)

आत्महित के अभिलाषी शिष्य जन को गुरु के समीप में व्याख्यान के अतिरिक्त दूसरों के अन्य कार्य को-उन के साथ बातचीत या परिहास आदि को इस प्रकार से छोड देना चाहिये जिस प्रकार कि अपने स्वस्थ होने को अभिलाषा करनेवाला व्यक्ति अपथ्य को, स्वास्थ्य के विरुद्ध आचरण को दूर से छोड देता है।

चित्तानुवर्ती सर्वत्र प्रविष्ट इव चेतसि।
प्रवर्तेत निवर्तेत हितकारी प्रियंकरः।। (43)

अपने हित व प्रिय को करने वाले शिष्य को गुरु के अनुकूल व्यवहार करते हुए उनके चित्त में प्रविष्ट हुए के समान सर्वत्र हितकर कार्यों में प्रवृत्ति करनी चाहिये।

यथा पूर्व तथा पश्चाद्यथाग्रे पृष्ठतस्तथा।
निर्व्याजवृत्तिः पूज्यानां सुखीकुर्यान्मनः सदा।। (44)

गुरु के साथ शिष्य की जैसी निष्कपट प्रवृत्ति पूर्व में रही है वैसी ही पश्चात् अध्ययन के पीछे भी रहनी चाहिये, तथा जैसा व्यवहार प्रत्यक्ष में रहता है वैसा ही

परोक्ष में रहना चाहिये। कारण कि पूज्य पुरुषों के समक्ष किया गया निष्कपट व्यवहार मन को सदा सुखी किया करता है।

ज्ञानाचारपरायणस्य ददतः संगृह्णतश्च श्रुतं
कां लक्ष्मीं न तनोति संप्रति तथा श्रीशासनस्योन्नतिम्।
संवेगादिगुणान् परस्वहितकृत्कल्याणमालार्पकान्
तस्मात्तीर्थकराज्ञया वितरणं ज्ञानस्य कार्यं बुधैः।। (45)

जो ज्ञानाचार में तत्पर होकर ज्ञान को दे रहा है तथा जो उसे ग्रहण कर रहा है उन दोनों के लिये यह दान कौन-सी लक्ष्मी को किस अपूर्व सम्पत्ति को तथा कौनसी सुन्दर शासन की उन्नति को जैन धर्म की किस अपूर्व उन्नति को नहीं विस्तृत करता है? अर्थात् इस दान के प्रभाव से आचार्य व शिष्य दोनों को ही अपूर्व लक्ष्मी का लाभ होता है तथा उस से जैन धर्म की असाधारण उन्नति भी होती है। इस के अतिरिक्त वह अन्य के व अपने हित के करनेवाले तथा कल्याणपरम्परा के देने वाले संवेगादि गुणों को भी विस्तृत करता है। इसीलिये विद्वानों को जिनेन्द्र की आज्ञा से ज्ञान का दान करना चाहिये।

नो माता सुतवत्सला न च पिता स्वामी प्रसन्नो न वा
न भ्राता ऽव्यभिचारिणो न सुहृदो नाश्वा न हस्त्यादयः।
यन्निष्कारण निष्कलङ्ककरुणाः सर्वोपकारोद्यता
हेयादेयविपश्चितां तनुमतां श्रीसूरयः कुर्वते।। (46)

बिना किसी स्वार्थ के ही निर्मल दया से संयुक्त होकर सब के उपकार में उद्यत रहनेवाले श्रेष्ठ आचार्य हेय व उपादेय के विचार में चतुर ऐसे प्राणियों का जो हित किया करते हैं, उसे पुत्र से प्रेम करनेवाली न तो माता करती है, न पिता करता है, न प्रसन्नता को प्राप्त हुआ स्वामी करता है, न भाई करता है, न निर्दोष-सदा अनुकूल आचरण करनेवाले-मित्र करते है, न घोडे करते हैं और न हाथी भी करते हैं। तात्पर्य यह कि लोक में गुरु के समान प्राणी का हित करनेवाला दूसरा कोई भी नहीं है।

गुरूपकारः शक्येत नोपमातुमिहापरैः।
उपकारैर्जगज्ज्येष्ठो जिनेन्द्रोऽन्यनरैरिव।। (47)

जिस प्रकार लोक में सर्वश्रेष्ठ जिनेन्द्र की अन्य साधारण मनुष्यों से तुलना नहीं की जा सकती है, उसी प्रकार गुरु के उपकारकी भी अन्यजनों के तुच्छ उपकारों के साथ तुलना नहीं की जा सकती है।

जन्मशतैरपि शक्यं नृभिरानृण्यं गुरोर्न तु विधातुम्।
तद् गुणदानाभावे ते च गुणास्तस्य सन्त्येव।। (48)

सेकडों जन्मों से भी मनुष्यों को गुरु के ऋण से मुक्त होना असंभव है। क्योंकि गुरु ने दिये हुए गुण उस के ही पास रहते हैं। वे वापिस नहीं किये जा सकते हैं।

ये शृण्वन्ति वचो जिनस्य विधिना ये श्रावयन्त्यादृता
मन्यन्ते बहु ये पठन्ति सुधियो ये पाठयन्ते परान्।
ये भूयो गुणयन्ति येऽपि गुणिनः संचिन्तयन्त्युद्यता
स्तेकर्म क्षपयन्ति भूरिभवजं पङ्कं पयोदा इव।। (49)

जो निर्मलबुद्धि भव्य विधिपूर्वक जिनेश्वर के वचन (आगम) को सुनते हैं, जो आदरपूर्वक उसे दुसरों को सुनाते हैं जो उसका बहुत सम्मान करते हैं, जो उसे स्वयं पढते हैं, जो दूसरों को पढाते हैं, जो गुणीजन उसको आवृत्ति करते हैं तथा जो उसकी चिन्तन-बार बार विचार व मनन-करते हैं व अनेक जन्मों में संचित कर्म को इस प्रकार से नष्ट कर देते हैं जिस प्रकार कि मेघ कीचड को नष्ट कर देते हैं।

बोधयन्त्यमलबोधशालिनो ये जनं जिनमतं महामतिम्।
सत्त्वसार्थमखिले महीतले लीलयैव परिपालयन्ति ते।। (50)

निर्मल ज्ञान से सुशोभित जो विद्वान् अतिशय बुद्धिमान जन-जिनमतका ज्ञान कराते हैं, वे समस्त पृथिवी के सर्व प्राणियों की लीला से अनायास ही रक्षा करते हैं ऐसा समझना चाहिये।

दर्शनचारित्राद्यं ज्ञानान्तर्भावतः पृथगनुक्तम्।
तद्रूपज्ञापनतो न परं दानं यतोऽस्यास्ति।। (51)

सम्यग्दर्शन व चारित्र आदिका ज्ञान में अन्तर्भाव होने से उन के दान का पृथक् उल्लेख नहीं किया है। कारण कि उनके सम्यग्दर्शन व चारित्र के स्वरूपका समझना ही है उनका दान है। इसलिये वह ज्ञानदान से भिन्न नहीं है।

ज्ञानस्य कश्चिदपरो महिमाद्भुतोऽस्य
दातार्थिभिस्तदपरैः परिपूज्यते यत्।
प्राप्नोति चार्थयशसी पदमत्युदार
मत्रैव जन्मनि परत्र च मोक्षलक्ष्मीम्।। (52)

ज्ञान का कोई आश्चर्यकारक अपूर्व ही माहात्म्य है। कारण कि उसका दाता ज्ञानार्थियों के साथ दूसरों से भी पूजा जाता है। उसे इसी जन्म में धन और कीर्ति के साथ महान पद की प्राप्ति होती है, तथा परलोक में मोक्ष लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

पारे वाङ्मयसागरं गुरुधियो जाताः सृजन्ति स्वयं
यच्छास्त्राणि सुमेधसः सुकृतिनो यच्चैकसंस्था नराः।
जायन्ते भुवनत्रयस्य महतो यज्ज्ञेयपारं गता-
स्तद्दत्तस्य निरीहमानमनसा ज्ञानस्य लीलायितम्।। (53)

कितने ही प्रकृष्ट बुद्धि के धारक जन जो शास्त्ररूप समुद्र के पार पहुँच कर स्वयं शास्त्रों की रचना करते हैं, कितने ही निर्मलबुद्धि पुण्यशाली मनुष्य जो एकसंस्थ गुरु से किसी पद, वाक्य या सन्दर्भ आदि को एक ही बार सुनकर आजन्म उसका स्मरण रखनेवाले हुआ करते हैं, तथा कितने ही जो महान् तीनों लोकों संबन्धी ज्ञेय के पारंगत सर्वज्ञ हो जाते हैं, यह सब निरीहमान मन से निःस्वार्थ वृत्ति से दिये गये उस ज्ञानकी ही लीला समझनी चाहिये।

ज्ञानदानफलम्

वीतरागवचनं सदागमं वञ्चनादिरहितं मनीषिणः।
आमनन्ति खलु रागपूर्वकास्तत्र दोषनिवहान्मनोभवान्।। (1)

वीतराग भगवान् का वचन उत्तम आगम है। क्योंकि उस में प्रतारणा आदि दोष नहीं है। विद्वान लोग मानते भी हैं कि वस्तुतः उस आगम में उत्पन्न होनेवाले

मानसिक दोषसमूह रागपूर्वक ही उत्पन्न होते हैं। (वीतराग भगवान में रागद्वेष न होने से आगम में दोष उत्पन्न नहीं होते।)

रक्तो हि रागिणं वक्ति वीतरागं परं नरम्।

द्विष्टश्च शिष्टमा चष्टे निकृष्टो दुष्टचेतसम्।। (2) धर्मरत्ना.

रागी पुरुष दूसरे वीतराग पुरुषों को रागी कहता है। तथा द्वेष से संयुक्त निकृष्ट मनुष्य शिष्ट-द्वेषरहित-पुरुष को दुष्ट अन्तःकरणवाला कहा करता है।

इत्थं रागादिदोषेण पुरुषो भाषते मृषा।

यस्यासो नास्ति नो भावी तस्य वाणी मृषा कथम्।। (3)

इस प्रकार पुरुष रागादिक दोषों से असत्य बोलता है। परन्तु जिसके वे रागादि दोष न वर्तमान में है और न भविष्य में भी संभव हैं उसकी वाणी असत्य कैसी हो सकती है?

वर्णाभिन्नो ध्वनिः किंचिच्छन्दोव्याकरणादिकम्।

लौकिकेष्विव स प्रायो वैदिकेष्वपि लक्ष्यते।। (5)

दूसरे, अकारादि वर्ण, विविध प्रकार की ध्वनि (शब्द) तथा कुछ छन्द और व्याकरण नियम आदि जैसे लौकिक वाक्यों में देखे जाते हैं, वैसे ही प्रायः वे वैदिक वाक्यों में भी देखे जाते हैं। (अतः लौकिक वाक्यों के समान वैदिक वाक्य भी पुरुषकृत ही होने चाहिये।)

प्रत्यभिज्ञा त्वनित्येऽपि ध्वाङ्क्षैः खलु न भक्ष्यते।

दीपज्वालादिवद् भ्रान्तिरुभये समवर्तिनी।। (6)

आगम को नित्य व अपौरुषेय मानने वाले यदि यह कहें कि उसे अनित्य व पुरुषकृत मानने पर 'ये वे ही गकारादि वर्ण हैं ऐसा प्रत्यभिज्ञान नहीं हो सकेगा। परन्तु वह होता अवश्य है। अतः वह आगम अनित्य नहीं हो सकता है। तो उसके उत्तर में यहाँ यह कहा गया है कि वह प्रत्यभिज्ञान तो अनित्य के विषय में भी हुआ करता है जैसे यह वही दीपक की शिखा (लो) है, अथवा ये वे ही नखकेश हैं, इत्यादि। उस प्रत्यभिज्ञान को अनित्य के विषय में कुछ कौवे नही

खा डालते हैं। वह तो नित्य व अनित्य दोनों के ही विषय में समान रूप से हुआ करता है। यह बात अलग है कि कहीं वह भ्रान्त होता है और कहीं यथार्थ होता है । प्रकृत में गकारादि के विषय में जो उक्त प्रकार का प्रत्यभिज्ञान होता है उसे दीपज्वालादिविषयक प्रत्यभिज्ञान के समान भ्रान्त समझना चाहिये।

अपि च ध्वनिते नित्ये मागासीदिति किं प्रमा।
तत्रार्थप्रतिपत्तिः किं सानित्यै तस्करैर्हृता।। (7)

इसके अतिरिक्त शब्द को सर्वथा नित्य मानने पर हम पूछते हैं कि जिस प्रकार वह वर्तमान में है उसी प्रकार वह पूर्व में भी रहा है, इसमें क्या प्रमाण है। इस प्रकार यदि कहा जाय कि गृहीत संकेत के अनुसार जो शब्दों से नियत अर्थ का बोध होता है वह उसकी पूर्ण विद्यमानता के बिना नहीं हो सकता है। यही उनके पूर्व अस्तित्व में प्रमाण है।

सूक्ष्मान्तरितदूरार्थवस्तुविस्तारवेदकः।
उपदेष्टा जिनो युक्तस्ततः सर्वहितंकरः।। (14)

इसलिये जो जिन भगवान् सूक्ष्म स्व-भावान्तरित परमाणु आदि कालान्तरित राम व रावण आदि और दूरवर्ती देशान्तरित मेरु आदि वस्तुओं के विस्तार को जानता हुआ सर्व प्राणियों का हित करने वाला है उसी को आगम का उपदेशक मानना योग्य है।

पूर्वापराविरुद्धं दृष्टे संवाद्यबाधिमदृष्टे।
क्वचिदप्यतीन्द्रियेऽर्थे संवादाद् दृष्टमाहात्म्यम्।। (15)

जो पूर्वापर प्रकरणों में विरोध से रहित होकर प्रत्यक्ष के विषयभूत पदार्थ के विषय में संवादक (सत्यतायुक्त) तथा परोक्ष पदार्थों के विषय में सब प्रकार की बाधा से रहित है, साथ ही किसी भी अतीन्द्रिय पदार्थों के स्वरूप वर्णन में संवाद (यथार्थता) के कारण जिसका माहात्म्य देखा गया है, उसी को यथार्थ आगम समझना चाहिये।

कान्तो जिनैरनेकान्तो व्याहृतो व्याहतो न हि।
जीवादिकः पदार्थो वा धर्मो वाप्यवधादिकः।। (16)

जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा मनोहर निर्बाध सिद्धान्त को अनेकान्त, जीव अजीव आदि को पदार्थ, तथा अवध-अहिंसा- आदिको धर्म कहा गया है।

जात्यन्धसिन्धुरविधेरतिदूरवर्ती
भानुप्रताप इव संतमसस्य जीवः।
सर्वागमस्य धरणीव तरुव्रजस्य
निःशेष दुर्नयविलासमहीध्र वज्रम्।। (17)

जन्मान्ध लोग हाथी का सूंड, पूँछ आदि एक एक अवयव को छूकर उसी को हाथी मानते हैं, इस विपरीत प्रकार से दूर रहनेवाला, सूर्यप्रकाश के समान अज्ञानरूप अन्धकार को हटानेवाला, वृक्षसमूह को जैसे जमीन उसी प्रकार सब सिद्धान्तों को आधार देनेवाला और दुर्नय के विलास रूप पर्वत को वज्र के समान समूल नष्ट करनेवाला यह अनेकान्त सिद्धान्त है।

उत्पद्यन्ते विपद्यन्ते पदार्थाः पर्ययात्मना।
ध्रुवा द्रव्यात्मना सर्वे बहिरन्तश्च सर्वदा।। (18)

पदार्थ पर्याय स्वरूप से उत्पन्न भी होते हैं, और नष्ट भी होते हैं। परन्तु द्रव्य स्वरूप से बाह्य-पुद्गल व धर्माधर्मादि जड पदार्थ-और अभ्यन्तर-चेतन जीव-ये सब ही पदार्थ नित्य हैं, अर्थात् द्रव्य स्वरूप से वे सदा अवस्थित रहनेवाले हैं। उनका कभी भी उत्पाद और विनाश सम्भव नहीं है।

निःसंदेहविपर्यासपर्यायैः पर्युपासितम्।
बाल्यादिभिर्निजं देहं पश्यन्त्येकमहर्निशम्।। (19)
अन्तरात्मानमप्येकं शोकानन्दादिभिर्युतम्।
समस्तवस्तु विस्तारं शेषमित्थं त्रयात्मकम्।। (20) युग्मम्।

जैसे-बाह्य पदार्थों में एक ही अपने शरीर को बाल्य व युवावस्था आदि पर्यायों से संयुक्त सन्देह व विपरीतता से रहित निर्मल ज्ञान के द्वारा निरन्तर देखा जाता है तथा अभ्यन्तर एक ही आत्मा को शोक व आनन्द आदि पदार्थों से संयुक्त देखा जाता है इसी प्रकार शेष सब ही पदार्थों को पर्यायस्वरूप से उत्पादव्ययात्मक और द्रव्यस्वरूप से ध्रुवात्मक-तीनों स्वरूप जानना चाहिये।

यस्याभावे सर्वे व्यवहाराः संभवन्ति न जनस्य।
जीयात्स जीवितसमो ऽनेकान्तः संततं कान्तः।। (33)

जिस अनेकान्त के अभाव में लोगों के सर्व व्यवहार असंभव हो जाते हैं वह जीवित के समान सुन्दर (प्रिय) अनेकान्त निरन्तर जयवन्त रहे।

बाधाविकलं सकलं धर्मादिकमप्यतीन्द्रियं वस्तु।
युक्तं युक्तिविविक्तैरनुमीयत एव जीवादिः।। (34)

धर्म व अधर्म द्रव्य आदि समस्त बाधा से रहित अतीन्द्रिय वस्तुओंका तथा जीवादि पदार्थों का पवित्र विविध युक्तियों के द्वारा योग्य अनुमान ही किया जाता है।

यत्रापि नानुमानं क्रमते ननु मादृशस्य मन्दमतेः।
बहुधा दृष्टावञ्चनजिनवचनात्तदपि निश्चेयम्।। (35)

जिस सूक्ष्म तत्त्व के विषय में मुझ जैसे मन्दज्ञानी का अनुमान प्रवृत्त नहीं होता है, उसका निश्चय जिनवचन से करना चाहिये। क्योंकि वह यथार्थ वस्तुस्वरूप का दिखलानेवाला व वंचना से रहित है।

लोकोऽपि सत्यवादं संवादाद्वादिनं विनिश्चित्य।
संदिग्धेऽर्थे साक्षिणमङ्गीकुरुते प्रमाणतया।। (36)

व्यवहारी जन भी सत्यवचन से सत्यवक्ता वादी का निश्चय करके संदिग्ध पदार्थ का निर्णय करने के लिये साक्षी को प्रमाण मानता है।

न च भगवतो ऽस्तु किंचन वञ्चनवचने निमित्तमित्युक्तम्।
प्रत्यक्षेणागम्यं तत्त्वागमनेन निःशेषम्।। (37)

भगवान् जिनेन्द्र के वंचनापूर्ण भाषण का कोई निमित्त नहीं रहा है-वंचनापूर्ण भाषण का निमित्त जो कषाय भाव है वह उनका नष्ट हो चुका है, यह पूर्व में कहा जा चुका है। इसीलिये उसे प्रमाणभूत मानकर जो समस्त वस्तुस्वरूप प्रत्यक्ष के द्वारा नहीं जाना जा सकता है उसका आगम से उक्त जिनवचन से निश्चय करना चाहिये।

आप्तपरंपरया स्याद् ग्रन्थेनान्येन वचनसाम्येन।
संदिग्धार्थे वचने क्वचन जिनोक्तत्वनिश्चयनम्।। (38)

संदिग्धार्थ विषयक वचन में जिनोक्त, तत्त्व का निश्चय कहीं आप्त परम्परा से, कहीं अन्य ग्रन्थ से तथा कहीं वचन की समानता से होता है।

धर्मास्तिकायमुख्यं कथंचिदप्यस्तु किं तेन।

कृत्याकृत्यं चिन्त्यं सुचेतसा पुण्यपापादि।। (39)

धर्मास्तिकाय आदि अतीन्द्रिय सूक्ष्म पदार्थ कैसे भी रहें, उनसे क्या सिद्ध होता है? आत्महितैषी भव्य जीव को निर्मल अन्तःकरण से आचरणीय पुण्य कार्य का तथा परित्यजनीय पापकार्य का विचार करना चाहिये। अभिप्राय यह है कि तत्त्व की सूक्ष्मता और बुद्धि की मन्दता के कारण यदि अतीन्द्रिय पदार्थों का ज्ञान नहीं हो सकता है तो न सही क्योंकि, उससे अभीष्ट की सिद्धि में कोई बाधा उपस्थित नहीं होती है। परन्तु आत्महित के साधनार्थ हेय व उपादेय का विचार करना ही चाहिये क्योंकि, उसके विना अभीष्ट प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता है।

तत्रास्ति कर्म चित्रं विचित्रफलसमुपलम्भतोऽनुमितम्।

जातं हेतोः सदृशान्न दृश्यते विसदृशं कार्यम्।। (40)

लोक में चूँकि कर्म का सुख दुःखादि रूप अनेक प्रकार का फल (कार्य) देखा जाता अतः इससे उसकी विविध रूपता का अनुमान होता है। कारण यह कि किसी एक सदृश कारण से उत्पन्न विलक्षण कार्य नहीं देखा जाता है, किन्तु कारण के अनुरूप ही कार्य की उत्पत्ति देखी जाती है।

एकजनका विजातौ स्त्रीपुंसौ यमलकौ प्रसाधयतः।

भिदुरायुः सौभाग्यादिभागिनौ भेत्तृ तत्कर्म।। (41)

एक माता-पिता से उत्पन्न युगल स्त्री-पुरुष आयु, सौभाग्य एवं सुख दुःखादि की भिन्नता का अनुभव करते हुए अपने कर्म की भिन्नता को सिद्ध करते हैं।

समेऽपि व्यापारे पुरुषयुगलस्यामलधियः

समाने कालादौ सकलगुणसाम्येऽपि भवति।

यदेकस्यानर्थो-द्रविणनिचयोऽन्यस्य सुखदो
विनिश्चेयं कर्म स्फुटतरमितोऽस्तीत्यनुमितम्।। (42)

किन्हीं निर्मलबुद्धि (विचारशील) दो पुरुषों की क्रिया, काल आदि और अन्य सब गुणों की समानता के होने पर भी उन दोनों में से एक की हानि और दूसरे को सुखप्रद धनसमूह का लाभ होता है। इससे कर्म के अस्तित्वका अनुमान होता है। इसीलिये यह स्पष्टतया समझ लेना चाहिये कि जीव जो भला बुरा आचरण करता है, तदनुसार उसके पुण्य-पाप का उपार्जन होता है, जिससे उसे भविष्य में सुख-दुःख को भोगना पडता है।

दारिद्रयं विदुषां विपन्नयवतां संपत्परा द्वेषिणां
वैधव्यं च वधूजनस्य वयसि प्रोल्लासिपीनस्तने।
यत्प्रेयोविरहः स्थिप्तिः सह खलैर्योगोऽध्ययाद्दारुणं
मुक्त्वा कर्म विचेतनं विकरुणं कश्चेतनश्चेष्टते।। (43)

विद्वानों को दारिद्र्य, न्यायमार्ग से चलनेवाले सत्पुरुष को विपत्ति, शत्रुओं को उत्तम संपत्ति, सुंदर और पुष्ट स्तनों के कारणभूत तारुण्य में स्त्रीजनों को वैधव्य की प्राप्ति, प्रिय मित्रादिकों का विरह, तथा दुष्टों के साथ संयोग; इस प्रकार से प्राणियों को जो अनुकूल व प्रतिकूल सामग्री प्राप्त होती है उसका कारण वह दुष्ट जड कर्म ही है। उस कर्म के विना भला कौनसा प्राणी प्रवृत्ति करता है? उसके विरुद्ध कोई कुछ भी नहीं कर सकता है।

दौर्गत्यं यदुदात्तचित्तसुधियो व्याधिव्यथा भोगिनां
दौर्भाग्यं रमणीयरूपरमणीलोकस्य लक्ष्मीवताम्।
तारुण्ये मरणं जितस्मरवपुः श्रीणां जरा श्रीमतां
नैवेदं समवत्स्यताविकरुणं कर्माभविष्यन्न चेत्।। (44)

यदि निर्दय कर्म नहीं होता तो जिनका मन उदार और बुद्धि निर्मल है ऐसे पुरुषों को दारिद्र्य नहीं प्राप्त होता, भोगी जन को रोग पीडा नहीं घेरती, सुंदर रूपयुक्त रमणियों को दुर्भाग्य (पतिका वियोग आदि) नहीं प्राप्त होता, धनिकों का तारुण्य में

मरण नहीं होता, तथा सुन्दरता से कामदेव को जीतनेवाले श्रीमान् लोगों को वृद्धावस्था नहीं प्राप्त होती।

अनुगुणे विगुणं विगुणेऽन्यथा परिजने स्वजनेष्टजनादिकम्।
भवति कर्मणि हन्त शरीरिणां नरपताविव पत्तिजनादिकम्।। (45)

खेद की बात है कि कर्म के होने पर जिस प्रकार राजा के अनुकूल व प्रतिकूल रहते हुए उसके पादचारी सैनिक आदि प्रतिकूल व अनुकूल होते हैं, उसी प्रकार कर्मोदयवश प्राणियों के परिजन (सेवकजन) के अनुकूल होने पर उसके पुत्रादिक स्वजन और इष्ट मित्र आदि विगुण-प्रतिकूल होते हैं तथा कभी पुत्रादिक स्वजन और इष्टमित्रादि के अनुकूल होने पर परिजन प्रतिकूल होते हैं।

किंचाविवादविषयं विहाय लोकायतं विषयलोलम्।
कर्माण्येव मन्यन्ते सामान्ये नास्तिकाः सर्वे।। (46)

विषयासक्त लोकायतिक-नास्तिक चार्वाक लोग कर्म को नहीं मानते हैं। वह अपने वाद का विषय नहीं है। उनको छोड़कर अन्य सब ही आस्तिक जन-आत्मा और परलोक को मानने वाले सामान्य से कर्मों को मानते ही हैं।

संयमभाजो जनमनितपूजनभाजनं जना यशसाम्।
दृश्यन्ते द्वन्द्वद्वयवियोगिनो योगिनः सुखिनः।। (47)

संयम का परिपालन करनेवाले सत्पुरुष लोगों के द्वारा की गयी पूजा के और यश के पात्र होते हैं। जो योगीजन द्वन्द्व युगल से-आरम्भ व परिग्रहरूप क्लेशद्वय से रहित हो चुके हैं, वे लोक में सुखी देखे जाते हैं।

आरम्भे संरम्भात्परिग्रहे चाग्रहाद्विधा द्वन्द्वः।
तनु चित्तसंगतानामसंगतस्त्यक्तसंगानाम्।। (48)

शरीर और मन से संगत-शरीरादि बाह्यपदार्थों में अनुरक्त-जनों के आरम्भ विषयक प्रयत्न और परिग्रह विषयक आग्रह से-आसक्ति से-दो प्रकार का द्वन्द्व रहा करता है किन्तु जो उस परिग्रह की ओर से निर्ममत्व हो चुके हैं, उनके वह दो प्रकार का द्वन्द्व नहीं रहता है।

रागादिदोषपूगापगमात्परमसुखसंगमः शमिनीम्।
आगमगदितोऽनुमानसिद्धो विशुद्धबुद्धीनाम्।। (49)

रागादिक दोषों के समूह के नष्ट हो जाने से निर्मल बुद्धि के धारक मुनिजनों को जो उत्कृष्ट सुख प्राप्त होता है उसका वर्णन आगम में किया गया है। तथा वह अनुमान से भी सिद्ध है।

अनुमीयतेऽत एव हि रागाभावः सदुपशमातिशये।
संभावनया दाह्याभाव इव हुताशनातिशये।। (50)

इसीलिये जिस प्रकार अग्नि के (उपशम की) अधिकता में इन्धन के अभाव की संभावना की जाती हैं, उसी प्रकार विद्यमान उपशम की अधिकता में रागादि के अभाव का अनुमान किया जाता है।

यो यस्येह विरोधी दृष्टस्तस्योदये तदितरस्य।
नाशोऽवश्यं वस्त्रे मालिन्यस्यैव शौक्ल्येन।। (51)

जो जिसका विरोधी होता है उसके वृद्धि में अन्य का विनाश देखा जाता है। जैसे शुक्लता से सफेदी की वृद्धि में मलिनता का विनाश।

एवं सज्ज्ञानादेः प्रकर्षपर्यन्ततः क्षयोऽत्यन्तम्।
क्वचिदपि जीवेऽविद्यातृष्णादेः संभवत्येव।। (52)

इसी प्रकार से किसी जीव में जब सम्यग्ज्ञानादिक गुणों का प्रकर्ष बढते बढते पूर्णावस्था को प्राप्त होता है, तब अविद्या (अज्ञान) व तृष्णा आदि का अतिशय विनाश उसके होता ही है।

चिरतरकालालीनं कलधौतोपलमलमिव प्रयोगेण।
झटिति विघटते जन्तोः कर्म ज्ञानादियोगेन।। (53)

जिस प्रकार दीर्घकाल से संश्लेष को प्राप्त हुआ सुवर्ण पाषाण का मैल प्रयोग से अग्नि के ताप से-शीघ्र ही विलीन हो जाता है, उसी प्रकार ज्ञानादि के संबन्ध से प्राणी का दीर्घ काल से संबद्ध कर्म भी शीघ्र नष्ट हो जाता है।

पापस्यापि विलोकयन्ति सुधियो लोकाः फलं दारुणं
चौराणां वधबन्धनं बहुविधं वित्तापहारादिकम्।
जिह्वाच्छेदनभेदनाद्यपयशो लोके मृषाभाषिणां
नानाकारनिकारमङ्गविगमाद्यन्याङ्गनासंगिनाम्।। (54)

विद्वान् लोग पाप के भयानक फल को देखते ही हैं । जैसे-लोक में चोरों को दूसरों के धन आदि के अपहरण से प्राप्त हुआ बहुत प्रकार का वध-बन्धन आदिका दुःख, असत्यभाषियों को जिव्हा का छेदन भेदन आदि एवं अपकीर्ति, परस्त्रीसेवियों को लिंगच्छेदनादिरूप अनेक प्रकार का अपकार।

अर्हच्छ्रीचूडामणिकेवलिकाज्योतिरमलशास्त्रादेः
संवादिनो जिनोक्तादतीन्द्रियोऽप्यागमः सत्यः।। (55)

श्रीजिनेश्वर ने कहे हुए सत्य ऐसे अर्हच्छ्रीचूडामणि, केवलिकाज्योतिरमलशास्त्र आदि निर्दोष शास्त्रों से अतीन्द्रिय आगम भी सत्य है। तात्पर्य-उपर्युक्त शास्त्रों की प्रतीति सत्यरूपा होने से जिनेश्वर के मुखसे जो दिव्य ध्वनि निकली थी वह सत्य है ऐसा अनुमान से सिद्ध होता है।

एवंविधसिद्धान्तादपि भगवान् साध्यते हि सर्वज्ञः।
विप्रतिपत्तौ झटिति प्रकटं कूटस्य दुर्दुरूढस्य।। (56)

उपर्युक्त सिद्धान्त से भी भगवान् सर्वज्ञ की सिद्धि की जाती है। इससे भिन्न मत प्रकट करने पर (भिन्न मत वाले का) असत्य दुर्नय झट से प्रकट हो जावेगा।

अन्योन्याश्रयदूषणं न च भवेत्पूर्वोत्तरोत्सारितं,
सर्वज्ञस्य निषेधनेऽपि समतान्येनाश्रयासिद्धता।
भात्यन्तःकरणे च तत्र वदतान्मीमांसकस्तत्कथं,
संतानेन विना बुधःस हि परान्विद्यान्कुतोऽनर्हतः।। (57)

इस में अन्योन्याश्रय दोष संभव भी नहीं है। क्योंकि इसका पहले ही उत्तर देकर निराकरण किया गया है। सर्वज्ञ भगवान् का निषेध करने के लिये दिया गया आश्रयासिद्ध नामक दोष अन्य आगम से समान है। यदि वह हृदय में प्रकाशित होता

है, तो मीमांसक उसे, नहीं कैसे कहेगा? वह ज्ञानी संतान के बिना अर्हत से अन्य लोगों को कैसे जानेगा?।

ये चेच्छन्त्यपि नेच्छन्ति सर्वज्ञं मानसे सदा।
तेषामपि स्फुरत्साक्षान्निराकार्यः कथं भवेत्।। (58)

(सर्वज्ञ को जानने की) जिनकी इच्छा है और जिनकी नहीं उन दोनों के भी मन में प्रत्यक्ष रूपसे स्फुरित होनेवाले सर्वज्ञ का निषेध कैसे किया जा सकता है?

इत्येवं मानतः सिद्धः सर्वज्ञो दोषवर्जितः।
स भव्यानुग्रहायैव प्रतिपादयति श्रुतम्।। (59)

इस प्रकार प्रमाण से दोषरहित सर्वज्ञ सिद्ध होता है। वह भव्य जीवों का अनुग्रह करने के लिये ही श्रुत का प्रतिपादन करता है, अर्थात् भावश्रुत का प्ररूपण करता है।

लिङ्गागमानपेक्षं किंचिदिदानीमृतं वदेत् क्वचित्।
एवं कोऽपि समस्तं साक्षात्कुर्वन्नहतकर्मा।। (60)

जैसे कोई पुरुष लिंग और आगम की अपेक्षा के विना कुछ सत्यार्थ का प्रतिपादन करता है, वैसे ही जिसने समस्त कर्मों को नष्ट कर दिया है ऐसा कोई महात्मा संपूर्ण पदार्थों का साक्षात्कार करनेवाला है।

नैवागमोऽस्त्यमूलः संबन्धाग्रहणतो न लिङ्गमपि।
तथ्यमतीन्द्रियमर्थं साक्षाद्विदितं जिनो वदति।। (61)

अमूल आगम नहीं है तथा बिना संबन्ध ग्रहण किये लिंगज्ञान भी नहीं है। श्री जिनेश्वर अतीन्द्रिय पदार्थों को प्रत्यक्ष से यथार्थ जानकर उनका व्याख्यान करते हैं।

गिरां विदन् दोषगुणौ कियन्तौ परोपकाराहितसुप्रवृत्तिः।
अन्योऽपि धर्मामृतधौतबुद्धिर्न वक्ति पूर्वापरसंविरुद्धम्।। (62)

जो वचनों के कितने ही दोष और गुणों को जानता है, जिस की परोपकार में उत्तम प्रवृत्ति है, तथा जिसकी बुद्धि धर्मरूप अमृत के द्वारा धो दी गयी है-निर्मल कर दी गई है-ऐसा अन्य भी-सर्वज्ञ से भिन्न अल्पज्ञ भी-पूर्वापर विरुद्ध वचन नहीं कहता है।

धर्मं विशुद्धमधिगच्छति शुद्धबोधो यः
श्रद्दधात्यविधुरो विधिना विधत्ते।
संबोधयत्यबुधभव्यजनं भवाब्धेरु-
त्तारकः सकरुणः स गुरुर्गुणाढ्यः।। (63)

जो निराकुल निर्मल ज्ञानी निर्दोष धर्म के स्वरूप को जानता है, उसके ऊपर श्रद्धान करता है, विधिपूर्वक उसका आचरण करता है, ज्ञानहीन भव्य जनों को उपदेश देता है, तथा जो दयार्द्र होकर उनका संसार-समुद्र से उद्धार करता है, इत्यादि गुणों से युक्त महात्मा को गुरु कहा जाता है।

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्र हृदयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः।
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परानिन्दया
ब्रूयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः।। (64)

जो विद्वान् गणी-आचार्य-समस्त शास्त्रों के रहस्य का ज्ञाता, लोकव्यवहार से परिचित, निःस्पृह, प्रतिभा-नवीन नवीन तर्कणा रूप बुद्धि-से सम्पन्न, शान्त, शंका के पूर्व ही उसके समाधान का अन्वेषक, प्रायः करके सब प्रकार के प्रश्नों को सहनेवाला-उनसे उद्विग्न न होनेवाला, प्रभावशाली, दूसरों के चित्त को आकर्षित करनेवाला, परनिन्दा से दूर, अनेक गुणों से विभूषित, तथा स्पष्ट व मधुर भाषण करनेवाला हो, वही धर्मकथा के कहने का अधिकारी-तत्त्व व्याख्याता-होता है।

देवागमगुरुतत्त्वं परीक्षितं पण्डितैरुपादेयम्।
तापाद्यैरिव काञ्चनमिह वञ्चनभीतचेतोभिः।। (65)

जिस प्रकार मन में अयथार्थता की आशंका करनेवाले ग्राहक यहाँ सुवर्ण की तपाने आदि उपायों द्वारा परीक्षा कर के उसे ग्रहण किया करते हैं, उसी प्रकार विद्वानों को देव, आगम और गुरु के स्वरूप की परीक्षा कर के ही उन को ग्रहण करना चाहिये।

आगमाधिगमनीयमशेषं निर्दिशन्ति खलु धर्मविशेषम्।
आगमव्यपगमे हि नियोगाज्जायते सकलधर्मविलोपः।। (66)

संपूर्ण धर्म विशेष-श्रावक और मुनियों का मूल व उत्तर गुणादिरूप आचार तथा जीवादिक तत्त्वों का स्वरूप-आगम से जाना जाता है, ऐसा विद्वान कहते हैं। ऐसे आगम का लोप होने पर नियम से समस्त धर्म का ही लोप संभव है।

आलोकेन विना लोको मार्गं नालोकते यथा।
विनागमेन धर्मार्थी धर्माध्वानं जनस्तथा।। (67)

जिस प्रकार पथिक जन प्रकाश के विना अभीष्ट मार्ग को नहीं देख सकते हैं, उसी प्रकार धर्म के अभिलाषी जन उस आगम के विना धर्म के भी मार्ग को नहीं देख सकते हैं।

उच्छिद्यमानो यत्नेन धर्मानुच्छेदवाञ्छया।
आगमः सति सामर्थ्ये रक्षणीयो विचक्षणैः।। (68)

धर्म की परम्परा का नाश न हो, ऐसी अभिलाषा रख कर जिन विद्वानों में उस आगम के संरक्षण करने का सामर्थ्य है उन्हें नष्ट किये जानेवाले उस आगम का प्रयत्न पूर्वक रक्षण करना चाहिये।

श्रेष्ठबुद्धिनरवाहनादिभिर्लेखितं सकलमेव शासनम्।
पालितं परमतद्विधिर्यथाकारि भव्यनिवहस्य दर्शितः।। (69)

श्रेष्ठ बुद्धि के धारक नरवाहन आदि राजाओं ने संपूर्ण जिनागम को लिखाया है तथा उसका संरक्षण भी किया है। साथ ही उन्हों ने भव्य समूह के लिये उस की उत्कृष्ट विधि को भी दिखलाया है। (नरवाहन राजा का दूसरा नाम भूतबली है। उन्होंने श्री धरसेन आचार्य के पास आग्रायणीय पूर्वगत पंचम वस्तु के चतुर्थ प्राभृत का अध्ययन किया और तदनन्तर उन्हीं ने षट्खण्डागम की रचना की है)

[विबुध श्रुतावतार]।

श्रेयसा क्षितिभुजाप्यनामिकाजन्मनि श्रुत विधिर्व्यरच्यतं।
तत्फलं च समलम्भि विश्रुतं दानतोर्यपरिवर्तनादिकम्।। (70)

श्रेयान् राजा ने अनामिका नामक कन्या के भव में श्रुतविधि नामक उपोषण

व्रत (158 दिनों का) को किया था। उसका उसने दान तीर्थ प्रवृत्ति आदि रूप प्रसिद्ध फल भी प्राप्त किया था।

संधार्याः सपरिच्छदाः श्रुतधराश्चित्रान्नपानादिना
लेख्यं पुस्तकजातमुत्तमधिया शस्तं च शस्तं मुदा।
आत्मीयं हिमरश्मिमण्डलतले दत्त्वात्र नामामलं
नानाबन्धनवेष्टनादिविधिना संरक्षणीयं सदा।। (71)

निर्मलबुद्धि श्रावक को सपरिवार श्रुतज्ञानियों का भोजन पानादि के द्वारा संरक्षण करना चाहिये। एवं अपनी उत्तम बुद्धि से आनन्दपूर्वक उत्कृष्ट से उत्कृष्ट शास्त्र समूह को लिखना चाहिये। तथा अपने निर्मल नाम को चन्द्रमण्डल के पृष्ठ पर दे कर अनेक बन्धन और वस्त्र वेष्टन आदि की विधि से उन शास्त्रों का सदा रक्षण करना चाहिये।

द्रविणं साधारणमुपकरणीयमथादरेण भरणीयम्।
पुस्तकसंघादीनां निमित्तमापत्ति संपत्तौ।। (72)

शास्त्र तथा मुनि व आर्यिका आदिरूप चार प्रकार के संघ आदि के ऊपर आपत्ति के आने पर उसके परिहार के लिये साधारण धन एवं उपकार के योग्य उपकरण आदि को पुष्ट करना चाहिये उनका दान करना चाहिये।

कुर्वाणा निर्वहणं धर्मस्यानिधनमित्थमिह धनिनः।
बध्नत्यनुबन्धि शुभं निबन्धनं' बन्धनविनाशे।। (73)

इस प्रकार से यहाँ धर्म का अखण्ड निर्वाह करने वाले धनिक जन व्यवधान रहित उस पुण्य कर्म को बांधते हैं, जो पापबन्धका नाश करने में समर्थ होता है।

तर्कव्याकरणाद्या विद्या न भवन्ति धर्मशास्त्राणि।
निगदन्त्यविदितजिनमतमिति जडमतयो जनाः केऽपि।। (74)

कितने जड़बुद्धि जन जिन भगवान् के अभिप्राय को न समझने के कारण यह कहते हैं कि तर्क, व्याकरण व ज्योतिष आदिक विद्यायें धर्मशास्त्र नहीं हैं।

द्रव्यानुयोगः सकलानुयोगमध्ये प्रधानोऽभिदधे सुधीभिः।
तर्कप्रमाणं प्रणिगद्यते ऽसौ सद्धर्मशास्त्रं ननु दृष्टिवादः।। (75)

परन्तु उनका वैसा कहना संगत नहीं है, क्योंकि, समस्त चारों अनुयोग में द्रव्यानुयोग मुख्य है, ऐसा विद्वानों के द्वारा कहा गया है। दृष्टिवाद स्वरूप वह द्रव्यानुयोग तर्क प्रमाण को समीचीन धर्मशास्त्र कहता है।

गणित धर्मकथायां चरणे द्रव्ये भवेयुरनुयोगाः।
व्याख्यातानां चतुर्णी तुर्यो वर्यः समाख्यातः।। (76)

गणित, धर्मकथा, चारित्र और द्रव्य इन चार को क्रमशः विषय करने वाले चार अनुयोग हैं। इन कहे हुए चार अनुयोगों में चौथा अनुयोग-द्रव्यानुयोग-श्रेष्ठ कहा गया है।

स्वामी समन्तभद्रः श्रीमानकलङ्कदेव इत्याद्याः।
तर्केण प्रमाणैरपि शासनमभ्युद्धरन्ति स्म।। (77)

स्वामी समन्तभद्र और श्रीमान् अकलंक देव आदि प्रमुख तार्किक आचार्यों ने तर्क से तथा अनुमानादि अन्य प्रमाणों से भी जिन शासन का उद्धार किया है।

मिथ्यादृष्टिश्रुतमपि सद् दृष्टिपरिग्रहात्समीचीनम्।
ताम्रं रसानुविद्धं कम्रं किमु काञ्चनं न संभवति।। (78)

सो ठीक भी है, क्योंकि, मिथ्यादृष्टियों के द्वारा प्ररूपित श्रुत भी सम्यग्दृष्टियों के द्वारा स्वीकार करने पर समीचीन हो जाता है। पारद रस से संबद्ध तांबा क्या मूल्यवान सुवर्ण नहीं बन जाता है?

दीप इव शब्दविद्या परमात्मानं च दीपयत्युच्चैः।
आत्मप्रकाशने ऽपि हि न तथा पुनरन्यशास्त्राणि।। (79)

जिस प्रकार शब्दविद्या (व्याकरण शास्त्र) दीपक के समान आत्मा और परमात्मा को भी प्रकाशित करती है, उस प्रकार अन्य शास्त्र-मिथ्यादृष्टि प्ररूपित श्रुत-केवल आत्मा को भी नहीं प्रकट करता है। कहा भी है।

चन्द्रं तदुक्तम्-चुचुम्बिषसि मूढ जिघृक्षसेऽर्कं।
द्यों प्रोर्णुनूषसि करेण सचन्द्रताराम्।।
दोर्भ्यां तितीर्षसि समुद्रमगाधपारं।
यच्छन्दशास्त्रमनधीत्य विवक्षसेऽर्थान्।। (79/1)

शब्द शास्त्र के अध्ययन के बिना जो तुम पदार्थों का विवेचन करना चाहते हो, उससे हम ऐसा समझते हैं कि तुम चन्द्रका चुम्बन करना चाहते हो, सूर्य को ग्रहण करने की इच्छा करते हो, अपने हाथ से चन्द्र और ताराओं सहित आकाश को आच्छादित करने की इच्छा करते हो। (तथा अगाध व अपार समुद्र को अपने दोनों बाहुओं से तरने की इच्छा करते हो। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार चन्द्र का चुम्बन स्पर्शन आदि सर्वथा असंभव है उसी प्रकार व्याकरण के अध्ययन के विना पदार्थों का व्याख्यान भी सर्वथा असम्भव है।)

व्याकरणालङ्कारच्छन्दः प्रमुखं जिनोदितं मुख्यम्।
सुगतादिमतमपि स्यात्स्यादङ्कं स्वमतमकलङ्कम्।। (80)

व्याकरण, अलंकार व छन्दः शास्त्र आदि जिनेश्वरकथित शास्त्र मुख्य हैं तथा बौद्ध आदि अन्य मत भी जब स्यात् पद से अंकित अर्थात् स्याद्वाद से भूषित होते हैं तब वे भी स्वमत-जिनमत और निर्दोष होते हैं। (तात्पर्य-बौद्ध व नैयायिकादिकों के शास्त्रों में वस्तु का स्वरूप सर्वथा नित्यानित्यादि रूप से कहा गया है।) यदि उसमें स्यात् पद को जोड़ दिया जावे तो वह भी अनेकान्तात्मक हो जाने से प्रमाणयुक्त होगा, तब उसे जैन मत कहने में कुछ हानि नहीं है।

मुनिमतमपि विज्ञातं न पातकं तनुविरक्तचित्तानाम्।
यत्सर्व ज्ञातव्यं कर्तव्यं न त्वकर्तव्यम्।। (81)

जिन सज्जनों का मन शरीर से विरक्त हो चुका है उनके लिये मुनि के मत का जानना भी पाप नहीं है। कारण यह कि जो भी कर्तव्य है उस सबको जान लेना योग्य है, किन्तु अकर्तव्य को जानना उचित नहीं है।

विज्ञाय किमपि हेयं किंचिदुपादेयमपरमपि दूष्यम्।
तन्निखिलं खलु लेख्यं ज्ञेयं सर्वज्ञमतविज्ञैः।। (82)

जो विद्वान् सर्वज्ञ के मत से परिचित है उन्हें जो कुछ भी हेय है, जो कुछ उपादेय है और अन्य जो कुछ भी दूषण के योग्य है, उस सब ही ज्ञेय को जानकर लिखना चाहिये।

ये लेखयन्ति सकलं सुधियोऽनुयोगं
शब्दानुशासनमशेषलङ्कृतीश्च।
छन्दांसि शास्त्रमपरं च परोपकार-
संपादनैकनिपुणाः पुरुषोत्तमास्ते।। (83)

जो विद्वान् संपूर्ण अनुयोग को, संपूर्ण व्याकरण शास्त्र को, समस्त अलंकार शास्त्र को छन्दः शास्त्र को और अन्य भी शास्त्र को लिखवाते हैं, उन्हें परोपकार करने में अतिशय चतुर पुरुषोत्तम समझना चाहिये।

ते धन्या धनिनस्त एवं भुवने ते कीर्तिपात्रं परं
तेषां जन्म कृतार्थमर्थनिवहं ते चावहन्त्यन्वहम्।
ते जीवन्तु चिरं नराः सुचरिता जैनं शुभं शासनं
ये मज्जद्गुरुदुःखमाम्बुधिपयस्यभ्युद्धरन्ति स्थिराः।। (84)

जो स्थिर विद्वान् महान् दुःखमाकालरूप समुद्र के जल में डूबते हुए जिनेश्वर के उत्तम शासन का उद्धार करते हैं वे धन्य हैं, वे हो धनिक हैं, वे ही उत्कृष्ट कीर्ति के पात्र हैं, उनका जन्म कृतार्थ है तथा उन को प्रतिदिन धन समूह की प्राप्ति होती है। उत्तम आचार के धारक वे पुरुष दीर्घ काल तक जीवित रहें।

किं किं तैर्न कृतं न किं प्रवहितं पापं प्रदत्तं न किं
केऽपाया न निवारितास्तनुमतां मोहार्णवे मज्जताम्।
नो पुण्यं किमुपार्जितं किमु यशस्तारं न विस्फारितं
सत्कल्याणकलापकारणमिदं यैः शासनं लेखितम्।। (85)

जिन्होंने उत्तम कल्याण समूह के कारणभूत इस आगम को लिखवाया है, उन्होंने कौन कौन से शुभ कार्य नहीं किये हैं, कौन कौन से पाप नष्ट नहीं किये हैं, कौनसा दान नहीं दिया है, मोहरूप समुद्र में डूबते हुए प्राणियों के कौनसे संकटों को दूर नहीं किया है, कौन सा पुण्य प्राप्त नहीं किया है, तथा किस निर्मल यश को लोक में नहीं फैलाया है? (अर्थात् उन्होंने सब ही उत्तम कार्यों को कर लिया है तथा चिर संचित पाप कर्म को भी नष्ट कर डाला है। इस से उनका निर्मल यश भी लोक में फैला है)।

निक्षिप्ता वसतौ सतां क्षितिपतेः संपत्प्रद मोदास्पदं
भाण्डागारितमामरं स्थिरतरं श्रेष्ठं गरिष्ठं पदम्।
सत्यं कारितमक्षयं शिवमुखं दुःखाय दत्तं जलं
धन्यैस्तैः स्वधनैरलेखि निखिलं यैर्वाङ्मयं निर्मलम्।। (86)

जिन्होंने अपने धन के द्वारा समस्त निर्मल आगम को लिखवाया है उन भाग्यशाली महापुरुषों ने हर्ष की कारणभूत राजा की संपत्ति को सज्जनों के घर में रख दिया है-अर्थात् उसके पढ़ने से सत्पुरुषों को श्रेष्ठ राज्यलक्ष्मी प्राप्त हो सकती है। अतिशय स्थिर, श्रेष्ठ व गौरवशाली देवों संबन्धी पद को-इन्द्रादि की विभूति को भाण्डागार में अवस्थित कर लिया है। अविनश्वर मोक्षसुख को सत्यंकार-बयाना-देकर अपने अधीन कर लिया है। तथा दुःख को जलांजलि दे दी है-उसे सर्वदा के लिये नष्ट कर दिया है।

विनयांजलि

आध्यात्म योगी निस्पृही महाकवि निर्लोभी आत्मज्ञानी महागुरु श्री कनकनन्दी गुरुदेव के पावन चरणों में कोटि कोटि नमन।

आचार्य भगवन् श्री कनकनन्दी गुरुदेव के विशिष्ट, प्रियाग्र विनयवान्, अनुशासित सुशिष्य ''ब्रह्मचारी जी श्रीसोहनलाल जी देवड़ा'' की सुसमाधि विनयांजलि-(21-1-2025)

शुभाकांक्षी-श्रीमति दीपिका नगीन शाह

''कनक गुरु की शरण गही, किया आतम उद्धार।
तेरी श्रद्धा भक्ति को, वंदन बारम्बार।। (1)
क्षमा विनय उर में धरे, तजा लोभ अरुमान।
संयम पथ पर चल पड़े, बढा आत्म सम्मान।। (2)
गुरु आज्ञा उर में धरी, अटूट श्रद्धा दर्शाय।
महागुरु (कनक गुरु) की शरण में, उत्तम समाधि पाय।। (3)''

आध्यात्मिक, निस्पृही, निराडम्बरी, निर्मोही, अप्रभावी, समता धारी, निर्द्वन्दी, वैश्विक सूरी, अभिनवश्रुत केवलि, सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य भगवन् श्री कनकनन्दी गुरुदेव एवं संसंघ की निःस्वार्थ भाव से सेवा करने का फल ब्रह्मचारी सोहनलालजी की सुसमाधि-

आचार्य भगवन् श्रीकनकनन्दी गुरुदेव से स्वयं जाकर मंत्र सहित आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद उत्तर दिशा की ओर पद्मासन में बैठकर सामायिक, सहस्रनाम जाप करते हुये निरोगी शरीर के माध्यम से निर्विकल्प समतामयी भावों से ब्रह्मतत्त्व में लीन हो गये।

आचार्य भगवन् श्री कनकनन्दी गुरुदेव के महानतम गुणों से संचिति आप थे। **महानतम् गुण**-समता-सरलता, सहजता, निस्पृहता, सहिष्णुता, धैर्यवान्, ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि-संतवाद-पंथवाद से परे निर्लोभी, अनेकान्तवादी, मितव्ययी, विवेकशील, अनुशासित निराडम्बरी...आदि अनेक गुण आपमें भी समाहित थे।

अनेक भवों के महान् सातिशय पुण्य से आत्मीय गुणों से विभूषित महाज्ञानी अलौकिक अद्वितीय महाऋषिवर की शरण में रहने का परम सौभाग्य आपको प्राप्त हुआ।

आप बार-बार यही बताते कि मेरे गुरुवर मेरे भगवान् हैं। मेरे गुरुदेव का Heart Pure है मेरे लिये तो वे ही सबकुछ हैं। वे जो भी कहते हैं वह शुभ भावों से कहते हैं। इनकी आज्ञा मेरे लिये सर्वोपरि (शिरोधार्य) है। अपने इन्हीं श्रेष्ठतम भावों से गुरु की सेवा की। सन् 2000 में स्वयं को आचार्यश्री के चरणों में समर्पित किया। सन् 2000 से 2025 तक अनवरत आपने माँ जिनवाणी की सेवा, गुरु-सेवा एवं पूरे संघ की सेवा समर्पित भावों से की। संघ सेवा करते हुये आपने कभी किसी से याचना नहीं की। कभी किसी को प्रलोभन देकर आपने दान राशि इकट्ठी नहीं की। आचार्यश्री की आज्ञानुसार सहज सरल स्वैच्छिक दान कोई देता तो आप स्वीकार कर बोलते कि आप आचार्यश्री को स्वयं बताकर आशीर्वाद प्राप्त कर ले।

आपका लेखा जोखा सराहनीय/प्रशंसनीय/अनुकरणीय था/आहार दान की राशि आहार में, ज्ञानदान की राशि ज्ञानदान में, औषधदान की राशि औषधदान में ही

खर्च करते। दान राशि का हिसाब एक रुपये का भी इधर उधर नहीं होता था। दान राशि का विवेकपूर्ण सदुपयोग होता। कोरोना काल 2020 से 2022 पुनर्वास कॉलोनी में आचार्यश्री के दीर्घकालीन (30माह) प्रवास में आपके सानिध्य में गुरु सेवा का सुअवसर मुझे, हम कॉलोनीवासियों को मिला। चौका सम्बन्धी, गुरु आवास-निवास या अन्य किसी भी प्रकार की व्यवस्था हो आपके मार्गदर्शन से हमारा कार्य सहज-सरल सुचारु रूप से हो जाता। हम जो गुरु सेवा कर रहे हैं उसमें हमारी शक्ति (ऊर्जा) आप हो। आप समन्वयकारी, उदारमन, मधुरभाषी सदैव प्रसन्न चित्त, आल्हादित रहने वाले थे। आपकी सोच सदैव सकारात्मक रही। आप आचार्यश्री के लघु नन्दन थे। आपने आगमोक्त वाणी गुरुवाणी को स्वीकारा और तदनुरूप आपने धर्म को आत्मासात् किया। आपके रोम रोम में गुरुभक्ति-श्रद्धा समाई हुई थी। वही भक्ति आपके भावों में सदैव झलकती थी। आचार्यश्री द्वारा वर्णित सम्पूर्ण साहित्य की आपने क्रमबद्ध सूची बना रखी थी। साहित्यों के क्रमबद्ध सेट जमाना, जिनवाणी प्रकाशित करवाने, प्रुफ रीडिंग आदि साहित्य संबंधी सभी कार्य आप सविनय करते थे। आप अपना आहार (भोजन) भी गुरुदेव जिस प्रकार लेते हैं उसी क्रम में गुरुदेव के आहार के बाद थाली में जो महाप्रसाद बचता वही सभी त्यागी-व्रतियों को बाँटकर आप ग्रहण करते। आचार्य भगवन् बताते हैं कि महाप्रसाद का फल मोक्ष है अर्थात् आप भी सोहन जी से सोहम् बन गये। आचार्य भगवन ने सोहन जी को सोहऽम् बना दिया है। जिनवाणी, गुरु सेवा का फल है।

समाधि

आचार्य श्री ने बताया कि स्वयं में ही स्व-स्वरूप में लीन होना, समता ही समाधि है। साधु बनते हैं जब से समाधि प्रारम्भ हो जाती है।

आचार्य श्री ने ब्रह्मचारी सोहनलालजी की समाधि को शुभ बताते हुये कहा कि यह उत्कृष्ट समाधि हुई है। शुभ लक्षण और शुभ शकुन दिख रहे हैं। यह समाधि संघ के लिये, योगिन्द्र गिरी के लिये इस नगर-क्षेत्र के लिये उत्तम (शुभ) है। ऐसी समाधि के लिये बड़े-बड़े आचार्य साधु भी तरसते हैं। उत्तम समाधि के लिये जीवन भर साधना करते हैं। ऐसी समाधि चतुर्थ उत्तम काल में भी साधुओं को

नहीं होती। आचार्यश्री ने कहा कि जागृत अवस्था में निराकुलता पूर्वक देह त्याग किया है अतः वे महान् और निकट भव्य हैं। निश्चित रूप से वे स्वर्ग में गये हैं।

देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में नवकोटि से वंदन करते हुये मैं भगवान से यही प्रार्थना करती हूँ कि आप निकट भव्यात्मा बन सिद्धपद प्राप्त करे आपका आशीर्वाद हम पर सदा बना रहे। मेरी भी ऐसी सुसमाधि हो ऐसी शुभ भावना सह।

-दीपिका नगीन शाह, गलियाकोट पुनर्वास कॉलोनी, सागवाड़ा

चातुर्मास-प्रवासों की स्वस्थ्य प्रतिस्पर्द्धा

सांस्कृतिक नगरी सागवाड़ा के वैश्विक ज्ञान-विज्ञान केन्द्र, योगेन्द्र गिरि में विराजित निस्पृह-निराडम्बर वैश्विक सन्त प्रवर आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव श्रीसंघ के प्रति बढ़ती आध्यात्मिक आस्था के फलस्वरूप वाग्वर अञ्चल से लेकर पूरे राष्ट्र में व्यक्ति-समाज-संस्था से लेकर विश्व विद्यालय तक चातुर्मास-प्रवास कराने की श्रेष्ठ स्वस्थ्य प्रतिस्पर्द्धा शिष्य-भक्तों में वृद्धिंगत होती ही जा रही है।

इस श्रृखंला में वर्ष 2025 का वर्षायोग चातुमार्स कराने की पुण्यशाली सन्धि प्राप्त करने वाले आगामी दीक्षाधारक गुरुभक्त सुश्रावक श्री सञ्जयजी दोशी, परतापुर वालों की प्रबल भावना है कि मैं आगे निस्पृह-निराडम्बर सन्त जैसी निवृत्तिपरक साधना करने हेतु चातुर्मास में दानादि पुण्यार्जन के साथ-साथ ज्ञानार्जन करने हेतु प्रतिबद्ध हूँ। आपकी भावना भक्ति से प्रभावित होकर लघु ग्राम मोर के हिन्दु समाज के आबाल वृद्ध वनिता भी बहुत उत्साहित व प्रतीक्षारत हैं। इसके साथ ही दीर्घकाल से प्रयासरत भीलूड़ा ग्राम के प्राकृतिक शिवगौरी ज्योतिष साधना आश्रम के संचालक गुरुभक्त सातिशय भक्तिवन्त गृहस्थ श्री शैलेन्द्रजी भट्ट भी अपने आश्रम में आचार्यश्री संघ का आजीवन चातुर्मास-प्रवास कराने हेतु कटिबद्ध व प्रयासरत हैं। वे यहाँ तक चाहते हैं कि श्री सञ्जयजी दोशी व सहयोगी उनके आश्रम में ही श्रीसंघ के वर्षायोग-चातुर्मास का लाभ प्राप्त करें। इस श्रृंखला में सागवाड़ा के गुरुभक्तश्रेष्ठी श्रीमान् पवन कुमार गोवाड़िया भी अपने नवनिर्मित वर्द्धमान सोयायटी परिसर में आगामी चातुर्मास कराने की भावना-योजना में प्रयासरत हैं।

देश की वर्तमान में आचार्यश्री संघ का सर्वाधिक चातुर्मास-प्रवास कराने वाली गलियाकोट पुनर्वास कॉलोनी में भी बालक बालिका युवा वनिता वृद्धजन गण मन श्रीसंघ के आगामी चातुमार्स प्रवास कराने हेतु अत्यन्त आशान्वित उत्साहित व प्रतीक्षारत हैं। क्षु. विस्मिताश्री माताजी द्वारा सृजित ग्रन्थ ''जैन विश्व विज्ञान'' हेतु आचार्यश्री ने शुभभावना सह शुभाशीर्वाद व कवितामय प्रस्तावना सम्प्रेषित की है।

शुभाकांक्षा-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

निराडम्बर-निस्पृह आचार्यश्री कनकनन्दी श्रीसंघ

दिशाबोध-साप्ताहिक चिंतन

जैन धर्म मे सबसे प्रमुख सिद्धांत है अहिंसा, और हमारे आगम शास्त्रों में इसकी बहुत ही सुक्ष्म व्याख्या देखने को मिलती है। परंतु व्यवहार के धरातल पर, हम अहिंसा को मुख्यतः खान पान तक सीमित कर देते है, जैसे आलू प्याज में अनंत जीव हिंसा मान लेते है और धर्म के नाम पर, इसके त्याग पर सबसे अधिक जोर देते हैं। यहाँ तक तो यह उचित भी है, परंतु आधुनिक जीवन में हम प्रतिदिन इस से भी बड़ी बड़ी हिंसा करते है और उस पर, न हमारी दृष्टि जाती है और न हमें अपराध बोध महसूस होता है। यह चिंताजनक विडंबना है और शायद इसीलिए कुछ विदेशी विचारक जैन धर्म को ''किचन रिलिजन'' भी बोल देते है। आइयें कुछ उदाहरणों से इस बिंदु को और गहराई से समझने का प्रयास करते है। हम हवाई जहाज से यात्रा करते है, क्या किसी ने सोचा है कि कितने अनंत जीव राशि की इसमें हत्या हुई? हमारे ब्रह्मचारी-व्रती श्रावकों का भी इस और ध्यान नहीं जाता। हमारा ध्यान भी इसरो के वैज्ञानिक सुरेंद्रसिंह जी पोखरना, प्रो राजमल जी कोठारी के अहिंसा पर उनके व्याख्यान सुनने के बाद ही गया है। हवाई जहाज से निकलने वाली विष युक्त गैसों से वाय मंडल में, अनंत जीवो की हिंसा हो रही है और अनेक प्रजातियां तक विलुप्त हो गयी है। इसी तरह से तेज गति के सड़क वाहन से तो प्रत्यक्ष ही हिंसा दिखाई देती है। क्या हमें इसके

अनावश्यक प्रयोग से बचने का प्रयास नहीं करना चाहिए? क्या इस ओर हमारी दृष्टि जाती है, हमें अपराध बोध महसूस होता है..?

वर्षा ऋतु में वनस्पति कायिक जीवो की बहुलता हो जाती है और उनकी विराधना न हो, उससे बचने के लिए साधु चार माह तक एक स्थान पर चातुर्मास स्थापित करता है, परंतु देखने में यह आ रहा है कि उसी काल में सबसे अधिक हिंसा के हम निमित्त बनते है। जमीन खोद कर बड़े बड़े पंडाल बनते है, साधु के बड़े बड़े आयोजन होते है, जिसके निमित्त, साधु तो नहीं विहार करते, परंतु भीड़ जुटाने के नाम पर श्रावक दूर दूर की यात्राएँ करते है। जो होता तो साधु के निमित्त से ही है। क्या कृत कारीत अनुमोदन का सिद्धांत यहाँ लागू नहीं होता? चातुर्मास काल में बाहर के लोगों की भीड़ इकट्ठा करने की लालसा के पीछे कौन सी मनोवृत्ति काम करती है, यह कोई छिपा हुआ रहस्य नहीं है।

इस संदर्भ में वैज्ञानिक धर्माचार्यश्री कनकनंदी जी मुनिराज का आदर्श उदाहरण समाज के सामने है जहाँ चातुर्मास पूर्ण सादगी के साथ सिर्फ अध्ययन-अध्यापन के साथ, चार मास बिना किसी आयोजन के संपन्न होते है। अन्य साधु भी ऐसा आदर्श प्रस्तुत करने लगे, तो कितनी आदर्श व्यवस्था बन जाए।

अर्थ अनर्थ का मूल है, यह जानते हुए भी, हमने धर्म को कितना खर्चीला बना दिया है। सारी धार्मिक गतिविधियां अर्थ-केंद्रित होकर सिमट गयी है। विचार तो इस पर होना चाहिए।

संतों एवं विद्वानों से विनम्र निवेदन

आगम के परिप्रेक्ष में आपके विचारों का स्वागत एवम् प्रतिक्षा

चिरंजी लाल बगड़ा संपादक-दिशा बोध विचार मासिक कोलकाता-30.3.2025-हिंदू नव वर्ष वि. स. 2082

उपरोक्त डॉ चिरंजी लाल जी बगड़ा, डॉ सुरेंद्र सिंह जी पोखरना, डॉ राजमल जी कोठारी आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के प्राचीन शिष्य है।

समाधि सम्बन्धि आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुदेव का प्रवचन

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

धर्मात्मा बन्धुओं प्रायः अरबों-खरबों वर्ष पहले राजा ऋषभदेव की सभा में नीलांजना की मृत्यु के बाद ऋषभदेव भगवान् को वैराग्य हो गया अर्थात् वृद्ध अवस्था में वैराग्य हुआ, बुढ़े हो गए थे। नीलांजना की मृत्यु का दृश्य देखने के बाद वैराग्य हुआ और मृत्यु देखने से वैराग्य हुआ जब कि दो कल्याणक हो चुके उसमें भी वैराग्य नहीं हुआ, इतने बच्चे पैदा हो गए उसमें भी वैराग्य नहीं हुआ, राजा बन गए तब भी नहीं, बच्चियों और बच्चों को ब्राह्मी लिपी-अंक गणित-कला-राजनीति-कानून आदि समस्त ज्ञान विज्ञान पढ़ाने के बाद भी वैराग्य नहीं हुआ। उनकी कितनी उम्र थी ज्ञात हैं? मान लीजिए की किसी की उम्र 84 वर्ष है तो 83 वर्ष तक वैराग्य नहीं हुआ अर्थात् बुढ़े (वृद्ध) हो गए थे परन्तु ऐसे तो तीर्थंकर बुढ़े नहीं होते है परन्तु गणित की अपेक्षा, लौकिक गणित या सामान्य गणित की अपेक्षा वो वृद्ध हो गए थे। इतनी उम्र व्यतीत होने के बाद नीलाजंना की मृत्यु को देखकर वैराग्य हुआ, इससे क्या शिक्षा मिलती है? प्रायः करके जीव सुख में, भोगों में रत रहता है, Eat, drink & die, परन्तु दुःख के समय में वैराग्य होता है परन्तु अधिकांश को श्मशानिय वैराग्य होता है जो श्मशान तक सीमित रहता है। एक व्यक्ति गुरु नानक से भेट करने के लिए गए और पूछते है गुरु नानक कहाँ है? तो एक व्यक्ति बोलता है श्मशान में है, तो वह व्यक्ति पूछता है कि इतने सारे लागों में मैं कैसे जानूंगा की गुरु नानक कौन है? तो एक व्यक्ति बोलता है कि जिनके पीछे भामण्डल, सफेद ओरा दिखे वो गुरु नानक है। जब वह व्यक्ति श्मशान में गया तो हजारों व्यक्ति थे और सभी के सिर के पीछे भामण्डल, सफेद ओरा था। उनको ज्ञात नहीं हुआ कि गुरु नानक कौन है? और सामान्य व्यक्ति कौन? फिर दाह संस्कार के बाद सभी धीरे-धीरे जाते है, नदी में स्नान करते है फिर धीरे-धीरे सभी के भामण्डल (प्रभामण्डल) गायब हो गए परन्तु एक व्यक्ति का भामण्डल अन्तिम तक बचा हुआ था वो कौन थे? गुरु नानक थे।

अहनि-अहनि भूतानी, गच्छन्ति यम मन्दिरं।
शेषाः जीवीतं इच्छन्ति, किं आश्चर्यं मतः परम्।। म.भा।।

जब पाँचों पाण्डव पानी पीने के लिए जा रहे थे तो यक्ष पूछता है कि मोही कहता है ये मरा है, वो मरा है, मेरी माँ मरी है, मेरा बाप मरा है, ये किड़े-मकोड़े मरे है परन्तु मोही जीव स्वयं को अजर-अमर मानता है। गुरु-शिष्य जा रहे थे, शिष्य देखता है सर्प एक मेंढक को खा रहा है और मेंढक एक पतंग को खा रहा है, तो वह गुरु से पूछता है कि ये सब क्या है? तो गुरु कहते है ये ही संसार है। एक-दूसरे को खाते है, एक दूसरे से भोग करते है परन्तु स्वयं के बारे में कुछ नहीं समझते है। आज यहाँ जो ये सभा लगी है क्या मनोरंजन के लिए, क्या खाना-खाने के लिए, यदि मनोरंजन के लिए या केवल खाना-खाने के लिए लगी है तो आप पाप कमा रहे हो या केवल दूसरो को प्रभावित करने के लिए बोल दिया तो भी पाप है। आध्यात्मिक दृष्टि से यदि इस सभा से कुछ ज्ञान-वैराग्य लिया तो अमृत है।

अयि कथमपि मृत्वा तत्वकौतूहली सन्।
अनुभव भव मूर्तेः पार्श्ववर्ती मुहूर्तम्।।
पृथगथ विलसंतं स्वं समालोक्य येन,
त्यजसि झगति मूर्त्या साकमेकत्वमोहम्।। (अमृत कलश.)

तुम लोग कोई एक बार मरे होंगे है न? कितनी बार मरे? 10 बार, 100 बार, करोड बार, Numberless (असंख्यात) बार, नहीं। Infinite & Infinite (अनन्त) बार मरे हो। जिसका गणित करने मे अभी super computer भी असमर्थ है, रामानुजन क्या?, आइन्स्टीन क्या? तुम सब मिलकर भी नहीं कर सकते की तुम कितनी बार मरे? कभी पशु बनकरके, कभी वेश्या बन करके, कभी शेर बन करके, कभी चिता, सर्प, पति, पत्नि, शत्रु बन करके, कभी तुम दूसरों को खाते हुए, कभी दूसरे तुमको खाते हुए। परन्तु आप लोगों ने कभी 24 घंटे में या 24 मिनट में यह चिन्तन किया कि who am I? what is my nature? What is my aim? & What is my gain? मैं कौन हूँ?, कहाँ से

आया? कहाँ जाना ? मेरा स्वभाव क्या? यदि तुम नहीं सोचते हो यह सब तो तुममें और किट-पतंग में कोई अन्तर नहीं हैं। अभी शास्त्र में भी आया है कि जो मनुष्य स्वयं को नहीं जानते वे पशु से ही नहीं किट से भी नीच है।

तो ये जो सभा लगी है यदि मनोरंजन के लिए आयोजित की गई है, तो पाप कमाने के लिए आयोजित की है। यदि यहाँ केवल खाना-खाने के लिए ही आए हो तो भी पाप कमाने के लिए आए हो। यदि केवल सामाजिक व्यवस्था के लिए भी आए हो तो वो भी पाप कमाने आए हो। यदि परिवार में कोई मर गया राजा, महाराज, सेठ, साहूकार वहाँ जाकर के आप gathering (सभा) करके केवल घडियाली आँसू बहाँ लिए या प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए या सामाजिकता प्राप्त या दूसरों का मन रखने के लिए भी आए हो तो पाप है। क्या ऋषभदेव ने नीलांजना की मृत्यु से पहले किसी और को मरते हुए नहीं देखा था ? अवश्य देखा ही होगा। उनकी कितनी आयु जानते हो? तुम्हारी आयु से अरबों-खरबों गुना ज्यादा थी, इतने समय में कितने ही लोग मर गए तो भी वह सत्ता-सम्पत्ति-भोगों मे लिप्त रहे। नीलांजना की मृत्यु को देखकर वैराग्य हुआ, अर्थात् कभी अच्छे दृश्य देखकर किसी को वैराग्य नहीं हुआ, कोई तीर्थंकर को नहीं हुआ। एक भी तीर्थंकर बताओ जिनको विवाह करते हुए वैराग्य हुआ हो, धन कमाते हुए, राजा बनते हुए वैराग्य हुआ हो, नहीं परन्तु युद्ध आदि में वैराग्य हो जाता है, वहाँ खून की नदी देखकर, लोगों की चितकार सुनकर। इसलिए यह सभा भी वैराग्य के लिए है। सामाजिक परम्परा निर्वाहन के लिए यदि आपने इस सभा का आयोजन किया है तो आपने कोई पुण्य नहीं कमाया, एक कण भी नहीं, एक पुण्य अणु भी नहीं मिलेगा क्योकि आपका उद्देश्य क्या, लक्ष्य क्या? यदि उद्देश्य सामाजिकता है, भीड़ जोड़ना है, खाना-खाना है, कुछ मनोरंजन करना है, कुछ बोलकर के प्रभाव डालना है दूसरों पर तो एक Atom (परमाणु) भी आपके पुण्य रूप में convert (परिवर्तित) नहीं होगा। हमारे आचार्यों ने कहा है-

अयि कथमपि मृत्वा तत्वकौतूहली सन्।
अनुभव भव मूर्तेः पार्श्ववर्ती मुहूर्तम्।
पृथगथ विलसंतं स्वं समालोक्य।
येन त्यजसि झगति मूर्त्या साकमेकत्वमोहम्म्।। अ.का

हे! मोही जीव तुम राजा बनने के लिए, भोग करने के लिए, दूसरों को नीचा दिखाने के लिए, पेट भरने के लिए कितनी बार मेरे हो? दूसरों को हराने के लिए, विजयी बनने के लिए अनन्त बार मरे हो। केवल निगोद में ही आपलोग अनन्त बार मर गए हो, तुम ही नहीं सभी तीर्थंकर, सभी शलाका पुरुष, सभी महापुरुष भी मरे है। तो ये मृत्यु मोहत्सव केवल वाचनिक नहीं होना चाहिए, केवल बुद्धि से ही नहीं होना चाहिए, क्योंकि धर्म बुद्धि से परे है। IQ से भी परे है। IQ के बाद EQ फिर SQ जो विज्ञान भी पहले नहीं जानता था।

समाधि मरण, ये कोई मृत्यु नहीं है, मृत्यु तो हर जीव करता है, तुम हर समय मरते हो, तुम बोलते हो मैं 10 वर्ष का बड़ा हो गया परन्तु नहीं 10 वर्ष तुम्हारी मृत्यु हो गई है। गर्भ में जब जीव आता है तब से मरण प्रारम्भ, हर Second ही नहीं हर समय मरते हो। ये कोई राजनीति की या शादी की या व्यापार की सभा नहीं है। यदि इस दृष्टि से आप यहाँ इक्कट्ठे हुए हो तो आपका यहाँ आना व्यर्थ है, कोई लाभ नहीं है। जैसे व्यापार-राजनीति समाज का मेला, ऐसे मेले-ठेले रूप में यदि आप लोग इक्कट्ठे हुए, केवल परम्परा निभाने के लिए, जताने के लिए, बताने के लिए तो आपको कोई पुण्य बन्ध नहीं होगा, यदि थोड़ा सा भी ज्ञान वैराग्य को लेकर जाओगे तो आप करोड़ों-अरबों रूपये खर्च करके, तीर्थ यात्रा करके, मंदिर-मूर्ति बनाकर के, उपवास करके, केशलोंच करके, नंगा रहके भी जो पुण्य नहीं करते उससे भी ज्यादा पुण्य होगा ये आध्यात्मिक ज्ञान, परम विज्ञान है। एक वकील था, वो सोने से पहले एक कागज पर It is my coat, It is my Notebook, It is my pent, It is my tie और स्वयं बच गया तो I am लिख कर सो गया। सुबह उठता है और देखता है कि है ये कोट है, पेंट

है, नोटबुक है आदि सब है परन्तु I कहाँ गया, I am कहाँ गया अर्थात् मैं कहाँ गया, मैं का उसको ज्ञान ही नहीं हुआ। इसी प्रकार यदि आपने देश-विदेश में पढाई कर ली, नेता बन गए, शिक्षक बन गए, मा-बाप बन गए, साधु-संत भी बन गए परन्तु यदि आपको स्वयं का ज्ञान नहीं, स्वयं को नहीं जानते हो तो करोड़ों शून्य Zero भी इकाई (1) के बिना शून्य ही रहते है। तो इसलिए सबसे महानतम् उपलब्धि, महानतम् धर्म स्वयं को जानना, स्वयं के लिए मरना है, यदि तुम स्वयं के लिए उत्कृष्ट मरोगे (समाधि) तो सिद्ध बन जाओगे। यदि यहाँ आकर आप लोग शरीर की नश्वरता को समझोंगे, आत्मा की अमरता को समझोंगे तो धन्य हो जाओगे। धार्मिक कार्य में 1000 खर्च होता है और विज्ञापन में, खाने में आदि-आदि आडम्बरों में करोड़ों रुपया खर्च कर लेते हो और ज्ञानार्जन कितना, शांति कितनी मिलती है? आध्यात्मिकता कितनी जागृत होती है? नैतिकता कितनी होती है? तो फिर समाधि कैसे हो जाएगी क्योंकि समाधि तो अंतिम फल है, अंतिम परिणती है। करोड़ों-अरबों सूर्य से भी ज्यादा शक्ति, प्रकाश आत्मा में है तो आत्मा के स्वभाव को प्रगट करने के लिए, आत्मा से परमात्मा बनने के लिए धर्म है, समाधि है। जो जघन्य रूप में समाधिमरण करे चाहे वह श्रावक हो, पशु हो उसे 7-8 भवों में मोक्ष प्राप्त हो जाता है। उत्कृष्ट समाधि मरण करने वाले के तो तद्भव में मोक्ष है जो अरहंत, तीर्थंकर के होता है। केवल श्रावक की ही नहीं, पशु की भी समाधि होती है। जो यह समाधि मरण की विनयांजलि सभा है आज उससे आप शिक्षा लेकर जाओ-

आदहिदं कादव्वं यदि चेत् परहिंद कादव्वं।
आदहिदं परहिदादो आदहिदं सुट्ठु कादव्वं।।

पहले आत्म हित फिर पर हित, तो इस समाधि मरण के उपलक्ष्य में आप सभी को आशीर्वाद देता हूँ।

बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः।
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने त्वां वन्द्य मानस्य ममास्तु देवि।। (11) द्वा.त्रि.

हर समय यह ही भाव रखो कि बोधि लाभ हो, स्कूल-कॉलेज का ज्ञान

बोधि नहीं है जानकारियाँ है भले PHD करते हो, भले वैज्ञानिक हो, भले जज हो वो बोधि नहीं है, Not Wisdom only Information, इसलिए बोधि प्राप्त करो, आत्मज्ञान प्राप्त करो, बोधि उसके बाद समाधि, स्वात्म उपलब्धि-आत्मा की उपलब्धि और उससे शिव सौख्य सिद्धि-शिव सुख की प्राप्ति होगी, मोक्ष सुख मिलेगा, सिद्ध बन जाओगे पर कब? जब परिणामों में शुद्धि होगी, इसलिए आप सभी को आशीर्वाद देता हूँ, आप लोगों में बोधि हो, समाधि हो, शिव सुख हो, यह लोक परलोक में आत्म विकास करते हुए परमात्म पद को प्राप्त करो। स्वर्गीय आत्मा के लिए और आप सभी के लिए आशीर्वाद।

धन्य आचार्य कनकनन्दी गुरु की अपूर्व प्राप्ति

-बा. ब्र. वर्ण जैन

(चालः रात कली एक ख्वाब में आई...)

धन्य है मेरा भाग्य (पुण्य) जगा है...कनकनन्दी गुरु मिले...
परम वीतरागी, निस्पृह संत साम्य...भावी ये गुरु मिले...धन्य...
इस संसार में मैं भटका था....तुमने ही मुझको तारा है...!
अनादि काल से अनन्त भवों में...मैंने बहुत दुख पाया है...
उस दुख से बचने का मार्ग...तुमने ही मुझको बताया है...
इसलिए तो मैंने आपको पाकर...स्वयं को धन्य-धन्य माना है...(1)...
राग-द्वेष-ईर्ष्या-घृणा-मोह-माया...वैर विरोध में था पड़ा...
हिंसादि पाप-क्रोधादिकषायों में...बहु काल से था मैं गढ़ा...!
ये विभाव त्यागना है ये बताकर...अनन्त उपकार किया है...
इसलिए तो मैंने आपको पाकर...स्वयं को धन्य-धन्य माना है...(2)...
कभी ऐकेन्द्रिय, कभी द्वि इन्द्रिय...त्रि-चतुर-पंचेन्द्रिय।
कभी निगोद-नरक, कभी तिर्यंच-मानव...तो कभी देव में भटका हूँ।।
ये चतुर्गति भ्रमण त्याग के पंचमगति...प्राप्ति का मार्ग बताया है...
इसलिए तो मैंने आपको पाकर स्वयं...को धन्य धन्य माना है...(3)...

योगेन्द्र गिरी-दिः-28/3/2025-रात्रिः-8:30

''जैनेश्वरी दीक्षा की विलक्षण यादें''

गणधराचार्य कुंथुसागर गुरुदेव को नमोस्तु

स्याद्वादवादी व सर्वोदयी आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव को नमोस्तु

लेखक-सौम्यनन्दी मुनि

मेरी निर्ग्रन्थ दीक्षा वैशाख शुक्ला 12 शुक्रवार,विक्रम संवत् 2082 दिनाङ्क 9 मई 2025 को योगेन्द्रगिरि अतिशय क्षेत्र पर संपन्न हुई। यहाँ 6 व 7 मई 2025 को तेज हवा के साथ वर्षा हुई उसके प्रभाव से संपूर्ण वातावरण में ठंडक व्याप्त हो गई तथा तूफान 42° से.ग्रे. से 30° तक हो गया। दीक्षा की अनुमोदना करने आये धर्मावलम्बियों को आनन्द का अनुभव हुआ। दीक्षा के समय मध्य में संगीत, वाद्ययंत्र का प्रयोग नहीं हुआ, तथा प्रचार के लिए पत्रिका, पेम्पलेट व होर्डिंग भी नहीं लगाये गये। आचार्यश्री कनकनन्दीजी सभी धर्मप्रेमियों को दीक्षा का उद्देश्य व महत्व क्या व क्यों लेते हैं इसका स्पष्टरूपेण संबोधन देते हुये ज्ञान करा रहे थे। सभी श्रोतागण स्तब्ध होकर तल्लीनता पूर्वकर शांत चित्त से सुन रहे थे तथा भूरी-भूरी प्रशंसा भी कर रहे थे व अपना मत व्यक्त करते हुये कह रहे थे कि हमने अन्य स्थानों पर भी दीक्षाएँ देखी है परन्तु यहाँ की विशेषता विलक्षण प्रतीत हुई। किसी भी प्रकार की बोलियाँ नहीं थी न किसी का स्टेज पर बुलाकर मान-सम्मान किया गया। स्वयं आचार्यश्री ने ही 3 (तीन) घंटे तक मंच का संचालन व दीक्षा विधि का पूर्णरूपेण ज्ञान कराया। अन्य स्थानों पर दीक्षा विधि कर दी जाती है, परन्तु कुछ भी ज्ञात नहीं कराया जाता है, वहाँ बोलियाँ, गाजे-बाजे, सम्मान व भोजन में ही समय व्यतीत हो जाता है। मेरे दीक्षा संस्कार हो रहे थे तो मेरा शरीर रोमांचित हो रहा था। मैं अपने भाग्य की सराहना हृदय से कर रहा था कि मेरा यह मनुष्यजन्म सार्थक हो गया है कि ऐसे निराडम्बर, निर्मोही व गुणग्राही आचार्य द्वारा दीक्षा संस्कार किये जा रहे हैं। मैं भी ऐसे ही गुणों को ग्रहण करूँ व ऐसे श्रेष्ठतम गुरु की शरण में रहकर समता तथा शांतिपूर्वक समाधिमरण करूँ। नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु।

This document was created with the Win2PDF “Print to PDF” printer available at

https://www.win2pdf.com

This version of Win2PDF 10 is for evaluation and non-commercial use only.
Visit https://www.win2pdf.com/trial/ for a 30 day trial license.

This page will not be added after purchasing Win2PDF.

https://www.win2pdf.com/purchase/